राजनीतिक घटनाविकास

पर रिपोर्ट

(नई-दिल्ली में 17 से 19 सितंबर 2016 तक हुई
केंद्रीय कमेटी की बैठक में स्वीकृत)

अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति

इक्कीसवीं पार्टी कांग्रेस के बाद से अन्य व्यस्तताओं के चलते, पहले तो पार्टी कांग्रेस द्वारा तय की गयी समय-सारिणी के हिसाब से सांगठनिक प्लेनम का आयोजन करने और दूसरे, हमारे दो सबसे मजबूत गढ़ों, केरल तथा प0 बंगाल में चुनाव के चलते, हम इस दौर में अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में आए महत्वपूर्ण घटनाविकास पर चर्चा और उसका आकलन नहीं कर पाए थे। हमने इस दौरान हुई अपनी केंद्रीय कमेटी की बैठकों में इस कमजोरी को दर्ज भी किया था। उपरोक्त व्यस्तताओं के चलते, केंद्रीय कमेटी की पिछली कुछ बैठकों में हम, राष्ट्रीय घटनाक्रम पर वितरित किए गए नोट्स पर भी चर्चा नहीं कर पाए थे। हमने केंद्रीय कमेटी की पिछली बैठक में तय किया था कि इसे जल्द से जल्द दुरुस्त किया जाना चाहिए। इसलिए यहां, 21वीं कांग्रेस के बाद के अंतर्राष्ट्रीय हालात के कुछ महत्वपूर्ण घटनाविकासों की समीक्षा प्रस्तुत की जा रही है।

वैश्विक आर्थिक संकट

20 वीं कांग्रेस के ''कुछ विचारधारात्मक मुद्दों पर प्रस्ताव'' और 21वीं कांग्रेस के राजनीतिक प्रस्ताव, दोनों में हम इस नतीजे पर पहुंचे थे कि 2008 में वित्त के बैठने से शुरू हुआ वर्तमान विश्व पूंजीवादी संकट, न सिर्फ जारी है बल्कि कई पहलुओं से और तेज भी हो रहा है। इस संकट से उबरने की विश्व पूंजीवाद की हरेक कोशिश ने एक नया और गहरा संकट ही पैदा किया है। इस समय भी तथाकथित ''कमखर्ची'' के कदमों के जरिए, मेहनतकश जनता को निर्ममता से निचोड़ने के जरिए इस संकट से उबरने की जो कोशिशें की जा रही हैं, वे भी विश्व पूंजीवाद को संकट से निकलने का कोई रास्ता मुहैया नहीं करा पायी हैं। जैसाकि हमने दर्ज किया था विश्व पूंजीवाद, आदिम संचय की लुटेरी प्रक्रिया को उन्मुक्त करने के जरिए, जनता का शोषण तेज करने के जरिए, इस संकट से उबरने की कोशिश कर रहा है।

इस सब का कुल मिलाकर नतीजा यही निकला है कि इसने नवउदारवादी निजाम में विश्वीकरण की, आर्थिक असमानताओं को बढ़ाने की अंतर्निहित प्रवृत्तियों को ही बल दिया है। अपनी ओर से यह विश्व अर्थव्यवस्था में और अलग-अलग सभी पूंजीवादी देशों में घरेलू मांग में गिरावट बने रहने की की ओर ले जाता है, जिसके नतीजे में आर्थिक विकास तथा वृद्धि के निचले स्तर देखने को मिल रहे हैं। जनता के विशाल हिस्से के हाथों में क्रय शक्ति में जारी गिरावट, आय व संपत्ति की असमानताओं के चौंकाने वाले तरीके से ऊंचे स्तरों में प्रतिबिंबित हो रही है। मैकेंजी ग्लोबल इंस्टीट्यूट का अनुमान है कि संकट के इस आठ वर्षों के दौरान अमरीका की 81 फीसद आबादी की शुद्ध आय या तो जहां की तहां बनी रही है या उसमें गिरावट आयी है। इटली के मामले में यही आंकड़ा 97 फीसद था, ब्रिटेन के मामले में 70 फीसद,

फ्रांस के मामले में 63 फीसद, आदि आदि। साफ है कि मुनाफे बढ़ रहे हैं, लेकिन जनता के हाथों में क्रय शक्ति घट रही है। इसके चलते, परंपरागत पूंजीवादी तरीकों से उत्पादित मालों की बिक्री के लिए बाजार का विस्तार करने तथा वृद्धि की कोशिशें सफल नहीं हो रही हैं।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा 2016 के लिए प्रस्तुत अनुमान में वैश्विक आर्थिक प्रदर्शन को, ''बहुत ज्यादा अर्से से बहुत नीचा'' बताया गया है। 2017 के पूर्वानुमान को घटा दिया गया है और अब 3.4 फीसद की वैश्विक वृद्धि की भविष्यवाणी की गयी है। यह अनुमान भी बहुत बढ़ा-चढ़ा लगता है। विश्व बैंक ने 2016 के जून की अपनी ताजातरीन विश्व आर्थिक संभावना रिपोर्ट में, एक बार फिर 2016 के लिए अपने विश्व वृद्धि अनुमान को घटाकर 2.4 फीसद कर दिया है, जबकि इससे पहले 2016 की जनवरी में ही उसने 2.9 फीसद का अनुमान पेश किया था।

खुद विश्व बैंक ने कमजोर निवेशों और निर्यातों की धीमी वृद्धि दर की, इस गिरावट के दो महत्वपूर्ण कारणों के रूप में पहचान की है। स्पष्ट रूप से ये दोनों कारक घरेलू मांग के स्तर से जुड़े हुए हैं, जो जनता के विशाल बहुमत के हाथों में क्रय शक्ति पर आधारित होता है।

इन अनुमानों के अनुसार अमरीकी अर्थव्यवस्था, 2016 की जनवरी में जो अनुमान लगाया गया था, उससे 0.81 फीसद कम दर से वृद्धि करने जा रही है। कुल मिलाकर उसकी वृद्धि दर 2 फीसद से नीची ही रहने का अनुमान है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने 2017 के लिए 2.2 फीसद की वृद्धि दर का पूर्वानुमान लगाया है। यूरोजोन में, उसके द्वारा थोपे गए कमखर्ची के भीषण कदमों के बावजूद, वृद्धि 1.6 फीसद रहने का ही अनुमान है। विश्व पूंजीवाद का तीसरा स्तंभ माने जाने वाले जापान में, एबनोमिक्स या एबनी अर्थशास्त्र की सारी ल फाजी के बावजूद, वृद्धि दर 0.5 फीसद के करीब ही रहने का अनुमान है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुसार, 2017 में उसके सिर्फ 0.2 फीसद की दर से ही वृद्धि करने की संभावना है।

घरेलू मांग का सिकुड़ना इस तथ्य में प्रतिबिंबित हो रहा है कि विश्व पूंजीवाद के इन तीनों प्रमुख केंद्रों में से कहीं भी, विनिर्माण के क्षेत्रों में करीब-करीब कोई वृद्धि ही नहीं हुई है।

बढ़ती बेरोजगारी

वृद्धि के इस निचले स्तर और संकट के बने रहने का स्वाभाविक परिणाम यह है कि बेरोजगारी और खासतौर पर युवाओं के बीच में बेरोजगारी, बढ़कर बहुत ऊपर चली गयी है। अमरीका का वर्तमान राष्ट्रपति चुनाव, बढ़ती बेरोजगारी के इसी बुनियादी मुद्दे के गिर्द केंद्रित है। ब्रिटेन के योरपीय यूनियन से अलग होने के निर्णय के पीछे भी एक कारक, युवाओं की बेरोजगारी का इस तरह पंगुताकारी स्तर तक चढ़ जाना भी था।

घरेलू मांग के स्तर को नीचे धकेलते हुए, मुनाफे अधिकतम करने की इस प्रक्रिया में निहित अंतर्विरोध, वृद्धि को कुंठित कर रहा है। विश्व बैंक ने इसे 'प्रतिकूल परिस्थिति' का नाम दिया है, जिनको कम कर के आंका गया था और इसी के चलते वृद्धि के और विश्व मंदी से उबरने के पूर्वानुमान सही साबित नहीं हो पाए हैं।

अमीरों को और अमीर और गरीबों को और गरीब बनाया

जैसाकि हमने अपनी 20वीं कांग्रेस के विचारधारात्मक प्रस्ताव में दर्ज किया था, अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय पूंजी द्वारा संचालित विश्वीकरण, नवउदारवादी सुधार प्रक्रिया के जरिए, मुनाफों को अधिकतम करने को ही अपनी मु य प्रेरणा बनाकर काम करता है। इसकी अभिव्यक्ति इस तथ्य में होती है कि संकट के इन वर्षों के दौरान अधिकांश वित्तीय संस्थागत ऋण कार्पोरेट क्षेत्र के ही हिस्से में आये हैं, न कि परिवारों के हिस्से में, जैसाकि पहले हुआ करता था। 2010 से उदीयमान बाजारों/ विकासशील अर्थव्यस्थाओं में गैर-वित्तीय निजी क्षेत्र के लिए ऋणों में बढ़ोतरी में तीन-चौथाई से ज्यादा हिस्सा कार्पोरेटों के हिस्से रहा था। कार्पोरेटों की बैलेंसशीटों का बैंकिंग व्यवस्था के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है। (भारत में आज हम जो कुछ देख रहे हैं, इस विश्व पूंजीवादी रुझान के, मोदी सरकार द्वारा चलाए जा रहे दरबारी पूंजीवाद द्वारा और बढ़ा दिए जाने को ही दिखाता है।)

कार्पोरेटों को इस तरह के भारी ऋण दिए जाने के चलते, ताकि वे अपने मुनाफों को ऊपर उठाए रख सकें और उनके एक्जिक्यूटिव भारी-भरकम तन वाहें बटोरते रह सकें, मुद्राकोष के अनुसार डॉइश बैंक विश्व वित्तीय स्थिरता के लिए सबसे बड़ा जोखिम बन गया है। उसका पूंजी आधार स्तर, 3 फीसद से नीचे चला गया है। 70,000 अरब डालर के अपने ऋणों के साथ, जोकि मोटे तौर पर सकल विश्व घरेलू उत्पाद के बराबर बैठता है, उसका परिसंपत्ति आधार बहुत ही कमजोर हो गया है। इटली के बैंक 360 अरब डालर से ज्यादा के डूबे हुए ऋणों के बोझ के तले दबे हुए हैं। ग्रीस में कुल ऋणों के 35 फीसद को ''नॉन पर्फार्मिंग'' यानी वसूल न होने वाले ऋणों की श्रेणी में डाला जा चुका है। इस सब के चलते, योरपीय यूनियन के अनेक देशों को पंगुताकारी संप्रभु ऋणों के बोझ झेलना पड़ रहा है। अपनी 20 तथा 21वीं कांग्रेसों में हमने इसका जो विश्लेषण प्रस्तुत किया था कि किस तरह विश्व पूंजीवाद कार्पोरेट दीवालों को संप्रभु दीवालों में तब्दील करने के जरिए इस संकट से उबरने की कोशिश कर रहा था, जोरदार तरीके से सही साबित हुआ है। स्पेन का राष्ट्रीय ऋण अब उसके कुल उत्पाद के 100 फीसद से ज्यादा हो गया है। 20वीं सदी की शुरूआत से अब तक कभी भी यह ऋण इस स्तर पर नहीं पहुंचा था। ग्रीस का ऋण, उसके सकल घरेलू उत्पाद के 170 फीसद के बराबर हो गया है। यह इसके बावजूद है कि ग्रीस को योरपीय यूनियन, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा योरपीय बैंक ने, 440 अरब डालर का बेल आउट पैकेज दिया है। इस बेल आउट पैकेज का 95 फीसद इन्हीं बैंकों से ग्रीस द्वारा लिए गए ऋणों से संबंधित भुगतानों में और योरपीय यूनियन, निजी निवेशकों तथा सटोरियों के भुगतानों में गया है। इस पैकेज में से 10 अरब डालर से भी कम वास्तव में ग्रीस में खर्च हुआ है। इस पैकेज के साथ जुड़े कमखर्ची के कदमों ने अर्थव्यवस्था को पंगु कर के रख दिया है। 2016 में ग्रीस की बेरोजगारी की दर 24 फीसद थी। वहां युवाओं की बेरोजगारी की दर 50 फीसद से ज्यादा है। वहां वेतन/ मजदूरी में 24 फीसद की गिरावट हुई है, न्यूनतम मजदूरी में 22 फीसद कमी की गयी है और ऐसा ही गरीबों की पेंशन के साथ हुआ है।

कुल मिलाकर विश्व पूंजीवादी अर्थव्यवस्था पूंजीवाद के व्यवस्थागत संकट से उबरने में असमर्थ है। जैसाकि हमने अपनी 20वीं तथा 21वीं कांग्रेसों में दर्ज किया था, संकट की तीव्रता के बावजूद, पूंजीवाद कोई खुद ब खुद बैठ जाने वाला नहीं है। अपने राजनीतिक विकल्प की अनुपस्थिति में पूंजीवाद, जनता का शोषण और तेज कर के इस संकट से उबर आता है। इस लगातार जारी संकट को देखते हुए, विश्व वित्तीय व्यवस्था के एक बार फिर बैठ जाने की नौबत आ सकती है। इसके सभी आसार नजर आते हैं कि विश्व वित्तीय संस्थाओं की और पूंजीवादी देशों में बैंकिंग व्यवस्था की पहले ही नाजुक स्थिति आगे और बिगड़ जाने वाली है।

अपने विश्व प्रभुत्व को पु ता करने की अमरीकी साम्राज्यवाद की कोशिशें

इस संकट के बीच अमरीकी साम्राज्यवाद, सैन्य हस्तक्षेपों व आक्रामकता के जरिए भी और ऐसे द्विपक्षीय व बहुपक्षीय व्यापार समझौतों के जरिए भी, जो उसकी अर्थव्यवस्था की लाभ उठाने तथा नये जान हासिल करने में मददगार हों, अपने विश्व वर्चस्व को सुदृढ़ करने की कोशिश कर रहा है।

व्यापार समझौते:

अमरीका ने ट्रांस एटलांटिक पार्टनरशिप पैक्ट (टीपीपी) पर दस्तखत कराए हैं, जिसे इस पीढ़ी की सबसे बड़ी व्यापार संधि के रूप में सराहा जा रहा है। अमरीका के नेतृत्ववाले इस समझौते में प्रशांत सागर के 12 तटवर्ती देशों को शामिल किया गया है। विश्व अर्थव्यवस्था का 40 फीसद इस सौदे के दायरे में आ जाता है। यह सौदा पांच साल लंबी गोपनीय वार्ताओं के बीच से निकल कर आया है। यह समझौता अमरीकी कार्पोरेटों के पक्ष में बहुत ज्यादा झुका हुआ है, जिन्हें ऐसा लगता है कि इसका अधिकार मिल गया है कि अब वे, टीपीपी जोन के देशों की संप्रभु सरकारों पर, उनके घरेलू नियमनों के चलते अपने मुनाफों की हानि के लिए, मुकद्दमे चला सकते हैं। यह साफ तौर पर इस समझौते में शामिल 11 अन्य देशों की संप्रभुता का अतिक्रमण है। यह राष्ट्रीय सरकारों के नियमन, कानूनों, कार्रवाइयों तथा न्यायिक फैसलों के खिलाफ, अगर उनसे कार्पोरेटों के मुनाफों को नुकसान पहुंचता नजर आता हो, विवाद के सभी मामलों में, अमरीकी कार्पोरेटों को ऊपर रखता है।

दूसरी ओर, योरपीय यूनियन के साथ समझौता करने की अमरीका की ऐसी ही कोशिश करीब-करीब विफल होने के कगार पर है। जर्मनी और फ्रांस, दोनों ही इस तरह के दबावों का प्रतिरोध कर रहे हैं। अमरीका इस सौदे के जरिए करीब-करीब सारी तटकर तथा नियमनकारी बाधाओं को खत्म कराना चाहता है कि एक तरह से एक ट्रांस-एटलांटिक मुक्त व्यापार क्षेत्र ही बनाना चाहता है। अगर यह कोशिश कामयाब हो जाती है तो अमरीकी बहुराष्ट्रीय निगमों को इससे बहुत भारी फायदा होगा। अमरीका अब इसके लिए जोर लगा रहा है ताकि 2016 के अंत तक प्रस्तावित इस संधि के लिए बातचीत को जिंदा रखा जा सके। इस मुद्दे पर साफतौर पर एक ओर अमरीका और दूसरी ओर योरपीय यूनियन तथा योरपीय यूनियन के देशों के बीच के अंतर्विरोध उभरकर सामने आ रहे हैं।

साम्राज्यवाद के आपसी अंतर्विरोध

इस लगातार जारी संकट के चलते साम्राज्यवाद के आपसी अंतर्विरोध, जिनके नवउदारवादी विश्वीकरण के तहत कुंद होने की बात हमने दर्ज की थी, विभिन्न रास्तों से निकलकर सामने आ रहे हैं। हमने अपनी 20वीं कांग्रेस के विचारधारात्मक प्रस्ताव में दर्ज किया था कि,

''बहरहाल, अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय पूंजी के जबर्दस्त बोलबाले का अर्थ साम्राज्यवाद के आपसी अंतर्विरोधों का खत्म हो जाना नहीं है। ये अंतर्विरोध न सिर्फ बने हुए हैं बल्कि असमान विकास के बुनियादी पूंजीवादी नियम को देखते हुए, इन अंतर्विरोधों का भविष्य में तीखा होना भी तय है। यह पूंजीवादी केंद्रों के बीच हितों के टकरावों की ओर ले जाता है, जो उनकी तुलनात्मक भावी ताकतों को देखते हुए आज, अक्सर दुनिया के संसाधनों पर नियंत्रण के लिए या दुनिया को

नये सिरे से ढालने की कोशिश में, अपने-अपने हिसाब से खास प्रभाव क्षेत्र गढ़ने के लिए, दुनिया के एक नये पुनर्विभाजन की कोशिश में, हितों के टकराव की ओर ले जाता है। इसकी अभिव्यक्ति भविष्य में विभिन्न साम्राज्यवादी ताकतों के बीच मुद्रा युद्ध में हो सकती है।''

हमने उक्त प्रस्ताव में यह निष्कर्ष निकाला था कि, ''साम्राज्यवाद के आपसी अंतर्विरोध ाी विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न रूपों में अभिव्यक्त हो रहे हैं, हालांकि फिलहाल ये अंतर्विरोध मुनाफे अधिकतम करने के लिए विश्व शोषण को तेज करने के लिए, भोंथरे बने हुए हैं।''

बहरहाल, 21वीं कांग्रेस के मौके पर साम्राज्यवादी शिविर की जिस सुसंबद्धता को दर्ज किया गया था, उसके छीजने के आसार दिखाई दे रहे हैं।

ब्रेक्सिट: ये अंतर्विरोध ऐसे तरीकों से अभिव्यक्त हो रहे हैं, जिनसे योरपीय यूनियन पर भारी दबाव पड़ रहा है। ब्रेक्सिट का अभियान और यूनाइटेड किंगडम में इस जनमतसंग्रह में अंतत: निकला परिणाम, इसी ओर इशारा करते हैं। ब्रिटिश जनता के करीब 52 फीसद ने ब्रेक्सिट के पक्ष में वोट डाला है। यह इसके बावजूद है कि इसके खिलाफ विश्व वित्त की ओर से और बहुराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा बहुत भारी दबाव डाला जा रहा था। अमरीकी राष्ट्रपति ओबामा ने भी सीधे-सीधे, योरपीय यूनियन से ब्रिटेन के अलग होने के खिलाफ प्रचार किया था। ब्रिटेन में बहुत सारे लोग और खासतौर पर गरीब, यह महसूस कर रहे थे कि योरपीय यूनियन एक ऐसे राज्य से ऊपर के राज्य के तौर पर काम कर रहा था, जो ब्रिटिश राष्ट्रीय संप्रभुता का अतिक्रमण करता था। यह वोट, तथाकथित कमखर्ची की नीतियों के विरोध को ाी प्रतिबिंबित करता है और बढ़ती असमानताओं के खिलाफ तथा छोटे से अल्पमत के हाथों में सत्ता, संपदा तथा विशेषाधिकार केंद्रित करने वाली व्यवस्था के खिलाफ एक विद्रोह को दिखा रहा था। ब्रिटिश मजदूर वर्ग ने रोजगार के परंपरागत अवसरों के छिनने के खिलाफ अपना विरोध जताया था। क युनिस्टों तथा वामपंथ ने, मजदूर वर्ग के जीवन पर योरपीय यूनियन के सत्यानाशी प्रभावों को और मजदूर वर्ग के कड़े संघर्षों के बाद जीते गए अधिकारों के व्यवस्थित तरीके से कमजोर किए जाने को रेखांकित करते हुए, योरपीय यूनियन से अलग होने के पक्ष में अभियान चलाया था। दक्षिणपंथी ताकतों ने भी योरपीय यूनियन से हटने के पक्ष में वोट डाले थे, लेकिन उन्होंने ऐसा नस्ली घृणा, प्रवासियों के चलते रोजगार छिनने और प्रवासियों की बाढ़ के चलते 'ब्रिटिश संस्कृति पर हमला हो रहा होने' के आधार पर किया था।

अंतर्राष्ट्रीय वित्त तथा योरपीय यूनियन के प्रचार के विपरीत, ब्रेक्सिट के फैसले के बाद यूनाइटेड किंगडम में बेकारी की दर में कोई खास बढ़ोतरी दर्ज नहीं हुई है। इस निर्णय के बाद बेरोजगारी की दर में कमी भी नहीं हुई है और यह दर 4.9 फीसद ही बनी हुई है।

योरपीय यूनियन के सकल घरेलू उत्पाद में यूनाइटेड किंगडम का हिस्सा 15 फीसद है और योरपीय यूनियन की वित्तीय सेवा गतिविधियों में उसका हिस्सा 25 फीसद है और योरपीय यूनियन के शेयर बाजार नकदीकरण में उसका हिस्सा 30 फीसद है। इस समय, योरपीय यूनियन की व्यवस्था की जगह पर, योरपीय यूनियन के अंदर द्विपक्षीय समझौते लाए जाने के लिए जोर-शोर से वार्ताएं चल रही हैं। ब्रिक्सिट के निर्णय के बाद, ब्रिटिश पाउंड को उथल-पुथल से गुजरना पड़ा था, लेकिन फिलहाल वह कमोबेश स्थिर हो चुका है। लेकिन, आर्थिक स्थिरता अब भी दूर ही बनी हुई है। योरपीय यूनियन से ब्रिटेन के अलग होने पर वार्ताओं की प्रक्रिया में, जो कई महीनों तक चलने जा रही है, अनेक

समस्याएं आएंगी और नये अस्थिरताकारी कारक उभरकर सामने आएंगे। विश्व अर्थव्यवस्था में और योरपीय यूनियन में अपने-अपने हिस्से को लेकर योरपीय शक्तियों और ब्रिटेन के बीच टकराव, जारी रहने जा रहा है।

स्वाभाविक रूप से ब्रेक्सिट के पक्ष में इस फैसले ने यूनाइटेड किंगडम में राजनीतिक उथल-पुथल पैदा की है। प्रधानमंत्री डेविड केमरून को इस्तीफा देना पड़ा है और नयी कंजर्वेटिव प्रधानमंत्री, टेरेसा मे को प्रधानमंत्री बनाया गया है। लेबर पार्टी में भी संकट पैदा हुआ है और उसके नेता जेरेमी कॉर्बिन को, टोनी ब्लेयर की 'न्यू लेबर' के अनुयाइयों के प्रभावशाली हिस्से का भीषण हमला झेलना पड़ा है।

दक्षिण की ओर राजनीतिक बदलाव

लगातार जारी आर्थिक संकट का राजनीतिक असर हो रहा है और अनेक विकसित पूंजीवादी देशों में राजनीतिक दक्षिणपंथ का उभार हुआ है।

अमरीका में नवंबर में होने जा रहे राष्ट्रपति चुनाव के लिए इस समय जारी प्रचार अभियान में ट्र प रिपब्लिकन उ मीदवार बनकर सामने आए हैं और हिलेरी क्लिंटन डेमोक्रेटिक पार्टी की उ मीदवार बनकर। डोनाल्ड ट्रंप अमरीका के हाल के इतिहास का ऐसा पहला उ मीदवार है, जिसने पार्टी के प्रतिष्ठान के लिए बाहरी होते हुए भी, एक प्रमु ा पार्टी की उ मीदवारी हासिल की है। आर्थिक संकट के दुष्प्रभावों के खिलाफ जनता के विक्षोभ की लहर पर सवार होकर उसने एक जहरबुझा अल्पसं यकविरोधी प्रचार अभियान छेड़ा है, जो बड़ी पूंजी के हितों का झंडाबरदार है और जनता को नस्ली, धार्मिक तथा इथनिक मुद्दों पर बांटता है। डैमोक्रेटिक पार्टी में इस चुनाव के लिए कड़ा मुकाबला देखने को मिला है। स्वयंभू डैमोक्रेटिक समाजवादी, बर्नी सेंडर्स ने मुक्त व्यापार समझौतों और पश्चिम एशिया में युद्ध जैसे सवालों पर मूलगामी रुख अपनाया था। दूसरी ओर हिलेरी क्लिंटन को उनके युद्धवादी विदेशी नीति संबंधी रुख और बड़े कारोबारियों से निकटता के लिए जाना जाता है। बहरहाल, सेंडर्स के अभियान को मिले लोकप्रिय समर्थन ने उन्हें अपने नीतिगत मंच में बदलाव करने के लिए मजबूर किया है।

डोलाल्ड ट्रंप का उभार, अमरीकी जनता के बीच बेचैनी के एक प्रबल रुझान को प्रतिबिंबित करता है। अमरीका में इस बार की चुनावी प्रक्रिया, 1960 के दशक के नागरिक अधिकार आंदोलन के दौर के बाद के, अब तक के कुछ सबसे भीषण नस्ली हमलों की पृष्ठभूमि में चल रही है। कालों के खिलाफ ऐसे हमलों के लिए आरोपित अधिकारीगण तथा सुरक्षा बलों के लोग, सजा से बच निकलते हैं। इससे अफ्रीकी-अमरीकियों के बीच भारी असंतोष पैदा हो रहा है। ''ब्लैक लाइ स मैटर''(कालों की जिंदगियों का भी मूल्य है) नाम के आंदोलन को कुछ जनसमर्थन मिल रहा है।

योरप में दक्षिणपंथ की ओर बदलाव तभी सामने आ गया था जब 2014 के चुनाव में योरपीय संसद की एक-चौथाई सीटें दक्षिणपंथी पार्टियों ने जीत ली थीं। अनेक योरपीय देशों में चुनाव में दक्षिणपंथ और वामपंथ के बीच कड़े मुकाबले देखने को मिले हैं, जिनमें दक्षिणपंथ ने अगर जीत नहीं भी हासिल की है, तब भी अपनी ताकत जरूर बढ़ा ली है। स्पेन में 2015 में हुए चुनाव में त्रिशंकु संसद आयी थी। बाद में 2016 में हुए चुनाव में भी किसी को स्पष्ट रूप से विजय तो नहीं मिली, फिर भी दक्षिणपंथी कंजर्वेटिव पार्टी ने पहले से 14 सीटें ज्यादा हासिल कर लीं और संसद में सबसे बड़ी पार्टी बन गयी। दूसरी ओर, कमखर्ची के हमलों के खिलाफ मजदूर वर्ग की विरोध कार्रवाइयों के बीच से

उभरकर आए नये गठबंधन, पोडेमस के वोट में 3 फीसद की कमी हो गयी, हालांकि उसकी सीटों की सं या पहले जितनी ही बनी रही। नीदरलेंड्स में भी कंजर्वेटिव संसद में सबसे बड़ी पार्टी बनकर सामने आए हैं। फ्रांस में बढ़ती इथनिक बेचैनी तथा तनावों के साथ, दक्षिणपंथी शक्तियां अपनी ताकत बढ़ा रही हैं। हाल में सामने आए ''बुर्किनी बैन'' विवाद ने एक बार फिर इथनिक-धार्मिक विभाजनों को गहरा कर दिया है। पोलेंड जैसे देशों में चुनाव में दक्षिणपंथ की ताकत बढ़ी है।

जर्मनी में राजनीतिक दक्षिणपंथ की पक्ष में बदलाव हुआ है। जर्मनी के एक प्रांत के लिए हाल में हुए चुनाव में दक्षिणपंथी अंधलोकवादी पार्टी, आल्टर्नेटिव फॉर जर्मनी (एएफडी) ने, सोशल डैमोक्रेटों के बाद दूसरा स्थान हासिल कर लिया है। उसने एंजेला मार्केल की पार्टी, क्रिश्चियन डैमोक्रेटिक यूनियन को तीसरे स्थान पर धकेल दिया है। एएफडी की यह कामयाबी, तीन अन्य प्रांतों में उसकी कामयाबी के ऊपर से आयी है। एएफडी को अब जर्मनी की कुल 16 में से 9 प्रांतीय संसदों में प्रतिनिधित्व हासिल है और अगले साल होने वाले संघीय चुनावों में उसके अच्छा प्रदर्शन करने के आसार हैं।

विरोधी रुझानः चूंकि परंपरागत सोशल डैमोक्रेट तथा कंजर्वेटिव, दोनों ही एक जैसी ही नवउदारवादी नीतियों पर चल रहे हैं, जनता इस तरह की पार्टियों के वहनीय विकल्प की तलाश कर रही है। योरपीय महाद्वीप में वामपंथी तथा दक्षिणपंथी, दोनों ही तरह की नयी ताकतें तथा पार्टियां उभरकर सामने आ रही हैं। मिसाल के तौर पर नीदरलेंड्स में जहां परंपरागत सोशल डैमोक्रेट हाल में हुए चुनाव में खिसक कर छठे स्थान पर चले गए, नवोदित सोशलिस्टों और सोशल-लिबरलों ने अपनी ताकत बढ़ायी है। इसी प्रकार इटली में 5-स्टार आंदोलन ने अपनी ताकत बढ़ायी है और रोम के मेयर के चुनाव में जीत हासिल की है। योरप की राजनीति में बहुत तीव्र मंथन हो रहा है। फ्रांस में इसी की एक अभिव्यक्ति में, जब धुरदक्षिणपंथी अंधलोकवादी मेरी ला पेन को देश के अनेक प्रांतों में बढ़त मिलती नजर आयी, जनता ने सचेत रूप से इस तरह वोट किया कि यह पार्टी हार गयी। जनता ऐसी पार्टियों व ताकतों की तलाश कर रह है जो सचमुच नवउदारवादी हमलों का मुकाबला करती हों और उनकी आजीविका की रक्षा कर सकती हों। इस प्रक्रिया में कुछ नये वामपंथी ग्रुपों तथा नयी वामपंथी पार्टियों का भी उदय हो रहा है।

तुर्की में त तापलट की विफलता

तुर्की के राष्ट्रपति एर्दोगन और उनकी सरकार के खिलाफ 15 जुलाई 2016 की त तापलट की कोशिश की विफलता ने, देश पर एर्दोगन का शिकंजा और मजबूत कर दिया है। त तापलट में हिस्सा लेने वालों पर सरकारी हमले में 200 से ज्यादा लोग मारे गए हैं। हजारों लोगों को गिर तार किया गया, जिनमें न्यायपालिका, सशस्त्र बलों, मीडिया और समाज के अन्य तबकों के भी लोग शामिल हैं।

देश पर और रक्षा बलों पर अपना शिकंजा मजबूत करने के साथ एर्दोगन, इस क्षेत्र में तुर्की के हितों को आगे बढ़ाने के लिए रूस और अमरीका, दोनों के साथ रब्त-जब्त कर रहा है। जहां रूस चाहता है कि तुर्की नाटो से बाहर आ जाए, अमरीका ने सीरिया में तुर्की के सशस्त्र हस्तक्षेप की इजाजत दे रखी है। इस सब का इस क्षेत्र पर क्या असर पड़ता है, यह तो आने वाले दिनों में ही पता चलेगा।

अमरीका के सैन्य पेंतरे

अपने विश्व वर्चस्व को पु ता करने की कोशिश में अमरीका, पश्चिम एशिया में अपने सैन्य हस्तक्षेपों के अलावा रूस का मुकाबला करने पर ध्यान केंद्रित कर रहा है और चीन की घेराबंदी की अपनी रणनीति को आगे बढ़ाने के अपने प्रयास तेज कर रहा है।

नाटो का पूर्व की ओर बढ़ाव: 2016 की जुलाई में हुए नाटो के वार्सा शिखर स मेलन में यह तय किया गया कि पहली बार नाटो की सेनाओं को बाल्टिक देशों में और पूर्वी पोलेंड में तैनात किया जाएगा। स्वाभाविक रूप से रूस ने इसे एक उकसावे की कार्रवाई की तरह लिया है और दोनों पक्षों ने अपनी हवाई तथा समुद्री गश्त बढ़ा दी है। नाटो ने अपनी नयी मिसाइल प्रणाली को रोमानिया में स्थापित किया है और एक और प्रणाली 2018 में पोलेंड में लगायी जाने वाली है। यह स्पष्ट रूप से 1987 की इंटरमीडिएट रेंज न्यूक्लिअर फोर्सेज़ ट्रीटी का उल्लंघन है, जिसका मकसद नाभिकीय हमले की चेतावनी पर तत्काल जवाब की प्रक्रिया को रोकना था। नाटो ने तीन बाल्टिक देशों-ईस्टोनिया, लाटविया तथा लिथुआनिया में अपनी लड़ाकू बटालियनें तैनात कर दी हैं।

यूक्रेन अब भी विस्फोट का बिंदु बना हुआ है। अमरीका, यूक्रेन की फासिस्टी सरकार को अपना पूरा-पूरा समर्थन दे रहा है और क्रीमिया का रूस के साथ जुड़ने का फैसला उसे अब भी हजम नहीं हुआ है।

पश्चिम एशिया और मध्य-पूर्व: हालांकि अमरीका को इराक तथा अफगानिस्तान से अपनी ज्यादातर फौजों को वापस बुलाना पड़ा है और वह सीरिया में सीधे हस्तक्षेप नहीं कर पाया है, फिर भी इस क्षेत्र में अमरीका की आक्रामक सैन्य पैंतरेबाजी जारी है। खून-खराबे भरे टकराव के चार साल बाद भी, साऊदी अरब तथा तुर्की जैसी, सीरिया के राष्ट्रपति असद की विरोधी अमरीका-समर्थित ताकतें, उनके निजाम को पलटने में विफल रही हैं। बहरहाल, इस प्रक्रिया में इस्लामी स्टेट के उभार ने अराजक स्थिति पैदा कर दी है। असद सरकार के लिए रूस के समर्थन ने लड़ाई के मैदान में ताकतों का संतुलन बदल दिया है। ईरान का पूर्ण समर्थन हासिल होने से, हालात और भी ज्यादा असद के पक्ष में हो गए। अमरीका को आखिरकार, असद निजाम को पलटने के अपने लक्ष्य को ही छोड़ना पड़ा। उसे अब रूस से बातचीत करनी पड़ रही है ताकि इस्लामी स्टेट के खिलाफ संघर्ष में तालमेल कर सके।

इस दौर में अनेक मुद्दों पर और खासतौर पर यूक्रेन के घटनाविकास को लेकर, एक ओर रूस और दूसरी ओर अमरीका-नाटो जोड़ी के बीच, बढ़ा हुआ तनाव तथा बढ़ता टकराव सामने आया है।

अमरीका-इस्राइल धुरी इस क्षेत्र पर अपना नियंत्रण मजबूत करने में लगी हुई है। फिलिस्तीनियों को प्राकृतिक संसाधनों तथा जल स्रोतों तक पहुंच से परे धकेलने की कोशिश जारी है और फिलिस्तीनियों पर इस्राइली सेनाओं के हमले ाी जारी हैं। पड़ौस में यमन में, अमरीका तथा नाटो के उसके सहयोगियों के पूर्ण समर्थन से, साऊदी अरब के नेतृत्व में चलाए जा रहे युद्ध ने, यमन के समान को करीब-करीब नष्ट ही कर दिया है।

शरणार्थी संकट

अमरीकी साम्राज्यवादी सैन्य हस्तक्षेपों ने इस क्षेत्र के अनेक देशों में सामाजिक स्थिरता तथा सिविल सोसाइटी को बुरी तरह से छिन्न-भिन्न कर दिया है। यहां के लोगों को भारी तकलीफों, बदहाली तथा असुरक्षा को झेलना पड़ रहा है। इराक युद्ध के बाद के दौर ने और सीरिया के वर्तमान टकराव ने, समूचे क्षेत्र को ही सांप्रदायिक आधार पर बांट दिया है। इसका नतीजा बहुत भारी मानवतावादी संकट के रूप में सामने आया है, जिसमें हजारों लोग इन देशों से पलायन करने पर मजबूर हुए हैं। अपने युद्धग्रस्त देशों से निकल भागने की कोशिश में, इनमें से सैकड़ों प्रवासियों ने अपनी जानें गंवायी हैं। योरप में इन शरणार्थियों की बाढ़ ने संकट पैदा कर दिया है और वित्तीय पूंजी के इसके दावों को झूठा साबित कर दिया है कि पूंजी की मुक्त आवाजाही के साथ खुली सीमाएं ही खुशहाली की ओर ले जाती हैं। जहां जर्मनी ने 2015 में दस लाख शरणार्थियों को अपने यहां जगह दी थी, अन्य योरपीय देश ऐसा करने के प्रति अनिच्छुक रहे हैं या शरणार्थियों को आने देने से इंकार ही करते रहे हैं। इससे योरपीय यूनियन में अंदरूनी अंतर्विरोध बढ़ गए हैं और इन देशों में धुर-दक्षिणपंथी, प्रवासीविरोधी ताकतों को बल मिल रहा है।

बढ़ता सैन्यीकरण

अमरीका तथा अन्य साम्राज्यवादी देशों और सैन्य गठजोड़ों द्वारा अपने सैन्य खर्चों में की जा रही बढ़ोतरी एक स्तर पर, सैन्य ताकत बढ़ाने तथा हस्तक्षेपों के जरिए, साम्राज्यवादी विश्व वर्चस्व को मजबूत करने की उनकी आकांक्षा को ही अभिव्यक्त करता है। इसे हम अपनी पिछली कांग्रेसों के प्रस्तावों में दर्ज करते आए हैं।

सैन्य खर्चों में बढ़ोतरी का एक और महत्वपूर्ण कारण यह है कि इस तरह की बढ़ोतरी, क्लासिकी पूंजीवादी 'अति-उत्पादन' संकट से बचने का भरोसेमंद नुस्खा है। सैन्य खर्चों से, सैन्य-औद्योगिक गठजोड़ में लोगों के लिए रोजगार पैदा होता है। यह ऐसा रोजगार है जो ऐसी कोई चीज नहीं पैदा करता है, जो मानवीय उपभोग के काम की हो। दूसरी ओर, इन लोगों को मिलने वाले वेतनों तथा उनके खर्च किए जाने से, उस अति-उत्पादन को सोख लिया जाता है, जो पूंजीवाद अपनी अंतर्निहित प्रकृति के चलते स्वाभाविक रूप से पैदा करता है।

बहरहाल, कार्पोरेटों के मुनाफे कमाने के लिए जरूरी है कि इस तरह सैन्य उत्पादों को बेचा जाए। इसी तरह वैश्विक 'शस्त्र बाजार' सामने आता है और रक्षा सौदों के लिए बेहिसाब लाबीइंग सामने आती है। हथियारों के इस तरह के सौदे वैश्विक तनाव पैदा होने से ही कामयाब हो सकते हैं। इसके चलते साम्राज्यवाद के सैन्य हस्तक्षेप होते हैं और उनसे इस धंधे को मजबूती मिलती है। यह प्रवृत्ति, जैसाकि हमने पहले भी दर्ज किया है, सारी दुनिया पर अपना वर्चस्व कायम करने की साम्राज्यवाद की कोशिशों में एक महत्वपूर्ण तत्व बना हुआ है।

हमारी पार्टी कांग्रेस के बाद के दौर में विश्व सैन्य खर्चों में वास्तविक मूल्य के लिहाज से 1 फीसद की बढ़ोतरी हुई है। 2015 में विश्व सैन्य खर्चे 1676 अमरीकी डालर के स्तर पर थे। यह विश्व के सकल घरेलू उत्पाद के 2.3 फीसद के बराबर बैठता है। विश्व वित्तीय तंत्र के लुढ़कने के चलते, 2011 से 2014 के दौरान विश्व सैन्य खर्चों में गिरावट आयी थी, लेकिन उसके बाद से उसका फिर से ऊपर उठना शुरू हो गया है। याद रहे कि इससे पहले 1990 के दशक से सैन्य खर्चों में लगातार बढ़ोतरी होती आयी थी।

नाटो द्वारा 2016 की जुलाई में जारी किए गए आंकड़े कुल मिलाकर इस गठजोड़ के साझीदारों द्वारा सैन्य खर्चों में बढ़ोतरी किए जाने को ही दिखाते हैं। 2016 में इस गठबंधन का खर्चा, 2015 के 892 अमरीकी डालर के स्तर से बढ़कर, 2016 में 918 अरब डालर तक पहुंच जाने वाला है। 2015 में नाटो के कुल रक्षा खर्चे का 72.2 फीसद अमरीका के ही हिस्से में आया था।

एशिया-प्रशांत क्षेत्र: अमरीकी नौसैनिक बेड़े का दो-तिहाई प्रशांत सागर में तैनात किए जाने के बाद से अमरीका ने अब भारत तथा जापान के साथ अपने त्रिपक्षीय रक्षा सहयोग को पु ता कर लिया है। ऑस्ट्रेलिया के साथ जुड़कर यह गठजोड़, दक्षिण एशिया में संतुलन अमरीका के पक्ष में झुकने का खतरा पैदा कर रहा है। अमरीका ने अब अपनी एशिया-प्रशांत रणनीति में भारत को भी शामिल कर लिया है, जिसने मर्जी से अपने लिए अमरीका के एक जूनियर साझीदार की भूमिका मंजूर कर ली है।

दक्षिण-चीन सागर: चीन और उसके पड़ौसियों के बीच विवादों में अमरीका हस्तक्षेप कर रहा है। दक्षिण-पूर्वी चीनी सागर में अमरीकी नौसैनिक गश्तों को इस तरह की दखलंदाजी करने के लिए ही तैनात किया गया है।

दक्षिण चीन सागर में विभिन्न द्वीपों तथा समुद्री चट्टानों पर स्वामित्व को लेकर इस क्षेत्र के विभिन्न देशों के बीच विवाद बने हुए हैं। इन पर चीन, फिलीपीन्स, ब्रेनेई, सिंगापुर, मलेशिया तथा वियतनाम की एक-दूसरे की विरोधी दावेदारियां हैं। फिलीपींस द्वारा समुद्री कानून के अंतर्गत इस विवाद के समाधान के लिए 2013 में अंतर्राष्ट्रीय आर्बिट्रेशन अदालत का दरवाजा खटखटाए जाने को चीन ने ठुकरा दिया था। फिर भी उक्त अदालत ने फिलीपींस के पक्ष में फैसला दिया है, जिसे मानने से चीन ने इंकार कर दिया है। चीन का दावा है कि फिलीपींस ने इस मामले में आर्बिट्रेशन अदालत के सामने जाकर, दोनों देशों के बीच हुए अनेक द्विपक्षीय समझौतों का उल्लंघन किया है। चीन का कहना है कि तमाम द्विपक्षीय मुद्दों व नौवहन सीमांकन विवादों पर, तीसरे पक्ष द्वारा विवाद निपटारे या समाधानों को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। वह संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणापत्र और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को नियंत्रित करने वाले नियमों के अनुसार, विवादों के द्विपक्षीय निपटारे के पक्ष में है। अमरीका यह दुष्प्रचार अभियान जारी रखे हुए है कि चीन इस क्षेत्र से पोतों की आवाजाही के खिलाफ और इस क्षेत्र के ऊपर से उड़ानें सीमित करने के लिए काम कर रहा है। दूसरी ओर चीन ने एलान किया है कि वह सभी तटीय देशों के साथ तथा अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ सहयोग करने के लिए तैयार है, ताकि दक्षिण चीन सागर में अंतर्राष्ट्रीय नौवहन गलियारों की सुरक्षा तथा वहां तक बेरोक-टोक पहुंच सुनिश्चित की जा सके। ये विवाद इस क्षेत्र के द्वीपों तथा समुद्री चट्टानों पर ऐतिहासिक दावों से निकले हैं।

अमरीका, चीन की बढ़ती आर्थिक ताकत और इस क्षेत्र में उसके व्यापारिक रिश्तों की घेरेबंदी की कोशिशें जारी र ो हुए है।

उधर अमरीका ने कोरियाई प्रायद्वीप में अपने उच्चस्तरीय सैन्य अ यास जारी रखे हैं। इस साल में ही अमरीका के 80 हजार से ज्यादा सैनिकों ने इन अ यासों में हिस्सा लिया है। कोरियाई जनवादी गणराज्य (डीपीआरके) के नाभिकीय कार्यक्रम पर अंकुश लगाने के नाम पर अमरीका, दक्षिणी कोरिया को मिसाइल प्रतिष्ठानों से लैस कर रहा है, जिनका वह रूस को घेरने की अपनी रणनीति के हिस्से के तौर पर भी इस्तेमाल करना चाहता है।

रूस-चीन सहयोग

अपने विश्व वर्चस्व को पु ता करने के अमरीका के इस तरह के कदमों के जवाब में, रूस तथा चीन ने हाल ही में अपने पारस्परिक सहयोग को बढ़ाने की ओर कदम बढ़ाए हैं। रूसी राष्ट्रपति पूतिन की 2016 की चीन यात्रा के फलस्वरूप, रणनीतिक स्थिरता के मजबूत करने और द्विपक्षीय संबंधों में सुधार करने पर एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया है। यह एक गौर करने वाला और स्वागतयोग्य घटनाविकास है।

बहुध्रुवीयता

अपनी 21वीं कांग्रेस में हमने यह दर्ज किया था कि 'शीत युद्ध के अंत' के बाद, अमरीकी साम्राज्यवाद द्वारा अपने वर्चस्व के अंतर्गत, दुनिया पर एकध्रुवीयता थोपने की जो कोशिशें की जा रही थीं, उनके विरोध में ब्रिक्स, आइबीएसए, बेसिक आदि के माध्यम से, बहुध्रुवीयता को मजबूत करने की विभिन्न अभिव्यक्तियां सामने आयी हैं।

बहरहाल, इस दौर में कुछ और महत्वपूर्ण बदलाव हुए हैं। ब्राजील तथा दक्षिण अफ्रीका के घटनाक्रम के चलते, जिसकी हम यहां चर्चा कर रहे हैं, आने वाले दिनों में उक्त संरचनाओं को काफी अनिश्चितताओं का सामना करना पड़ सकता है।

बहरहाल, रूस तथा चीन के बढ़ते सहयोग के अलावा भी, नये प्रयास भी सामने आ रहे हैं। मास्को के नेतृत्व में गठित यूरेशियाई इकॉनमिक यूनियन ने रूस, अर्मीनिया, कजाखस्तान तथा बेलारूस की अर्थव्यवस्थाओं को आपस में बांधा है, जिनका संयुक्त सकल घरेलू उत्पाद 40 खरब डालर से ज्यादा है। इसी दौरान एशियन इन्फ्रास्ट्रक्चर इन्वेस्टमेंट बैंक के साथ, जिसका मु यालय पीकिंग में है, पिछले साल हुई स्थापना के बाद से कुल 57 सदस्य जुड़ चुके हैं और इनमें यूनाइटेड किंगडम जैसे देश भी शामिल हैं, जो अमरीका की आपत्तियों के बावजूद, इसमें शामिल हुए हैं। चीन ने न्यू सिल्क रोड इकॉनमिक बैल्ट तथा 21वीं सदी नौवहन सिल्क रोड--जिन दोनों को मिलाकर ''वन रोड, वन बैल्ट'' के नाम से जाना जाता है--जैसी जो बड़ी पहलें की हैं, उनमें एशिया, अफ्रीका, मध्य-पूर्व तथा योरप के 65 देशों में, जिनकी कुल आबादी 440 करोड़ बैठती है, सड़क, रेल, बंदरगाह तथा पाइप लाइन में निवेश किए जाने वाले हैं।

रूस की यूरेशियाई इकॉनमिक यूनियन के जरिए यूरेशिया के एकीकरण और चीन व रूस के नेतृत्ववाले शांघाई सहयोग संगठन के फलस्वरूप, यूरेशिया की दो बड़ी ताकतों, रूस तथा चीन के बीच अनेक नये आर्थिक तथा सैन्य सहयोग समझौते हुए हैं।

समाजवादी देश

चीनः लगातार जारी विश्व पूंजीवादी संकट की पृष्ठभूमि में चीन की आर्थिक वृद्धि दर धीमी होकर 6.7 फीसद तो हो गयी है, लेकिन यह चीनी सरकार की इच्छा के अनुरूप हुआ है, जिसने अपनी दो अंकों की वृद्धि दर को धीमा करने का फैसला लिया था और इस साल के लिए 6.5 से 7 फीसद तक का लक्ष्य रखा था। मौजूदा विश्व आर्थिक परिदृश्य को देखते हुए, चीनी सरकार सेवाओं के क्षेत्र पर ध्यान केंद्रित करने के जरिए तीव्र वैश्विक मंदी की काट करने की कोशिश कर रही है। आज चीन के सकल घरेलू उत्पाद का आधा सेवाओं के क्षेत्र से आता है और उसके शहरी रोजगार का

बहुमत इसी क्षेत्र में है। पिछले कुछ वर्षों में उसका जोर अपने ढांचागत क्षेत्र के और विकास के लिए, बढ़े हुए सार्वजनिक निवेशों के जरिए घरेलू मांग के विस्तार पर रहा था। चीन अब दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन गया है। उसका विदेशी मुद्रा का संचित कोष सबसे बड़ा है, 32 खरब डालर या उसके सकल घरेलू उत्पाद के 30 फीसद के बराबर।

क्यूबा: क्यूबा की अर्थव्यवस्था में पिछले पांच वर्ष में औसतन 2.9 फीसद की दर से, धीमी वृद्धि दर्ज हुई है। 2015 में उसकी अर्थव्यवस्था 4 फीसद की दर से बढ़ी थी, लेकिन 2016 के लिए 2.6 फीसद का पूर्वानुमान है।

क्यूबा की क युनिस्ट पार्टी की पिछली, 7वीं कांग्रेस ने एक दस्तावेज अपनाया था: ''2030 तक के लिए कार्यक्रम: क्यूबाई समाजवाद की सैद्धांतिक अवधारणाएं।'' इस दस्तावेज का यह निष्कर्ष है कि राज्य अर्थव्यवस्था में मु य खिलाड़ी बना रहे हैं, जबकि गैर-सरकारी खिलाड़ियों को आर्थिक गतिविधियों में हिस्सा लेने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा होगा। शिक्षा, स्वास्थ्य रक्षा, संस्कृति में और सुधार करने के समाजवादी लक्ष्यों की प्रधानता बनी रहेगी। इस दस्तावेज पर एक मुक मल सार्वजनिक बहस इस समय क्यूबाई समाज में सभी संस्तरों पर चल रही है। इन बहस-मुबाहिसों के पूरे होने के बाद, इस बहस के आधार पर केंद्रीय कमेटी इस दस्तावेज को अंतिम रूप देगी। 2016 के आखिर तक इस प्रक्रिया के पूरे हो जाने की उ मीद की जाती है।

54 साल के अंतराल के बाद, क्यूबा और अमरीका के बीच कूटनीतिक रिश्ते बहाल हुए हैं और राष्ट्रपति ओबामा पिछले 80 साल में क्यूबा का दौरा करने वाले पहले अमरीकी राष्ट्रपति बन गए हैं। फिर भी, क्यूबा के खिलाफ अमरीका द्वारा थोपी गयी आर्थिक नाकेबंदी अब भी बनी हुई है। अमरीका अब भी ग्वांथानामो खाड़ी पर काबिज बना हुआ है। क्यूबाई पार्टी का नेतृत्व अपनी इस मांग पर कायम है कि अमरीका को, इस आर्थिक नाकेबंदी के चलते क्यूबा को हुए नुकसान की भरपाई करनी चाहिए।

वियतनाम: पिछले दो वर्षों से वियतनाम ने सकल घरेलू उत्पाद में 6 फीसद की वृद्धि दर बनाए रखी है। वियतनाम की सरकार ने चालू साल के लिए 6.7 फीसद की वृद्धि दर का लक्ष्य तय किया था। लेकिन, देश में गंभीर सूखे के चलते, इसे घटाकर 6.27 फीसद कर दिया गया है। वियतनाम, टीपीपी के हस्ताक्षरकर्ताओं में से एक है। 2016 में संपन्न हुई वियतनाम की क युनिस्ट पार्टी की 12वीं कांग्रेस ने, राजनीतिक रिपोर्ट का अनुमोदन करने के अलावा 2011-15 के दौरान सामाजिक-आर्थिक विकास के कामों के परिपालन की समीक्षा की और 2016-20 के लिए निर्देशों व कामों को तय किया। इस कांग्रेस ने पार्टी के निर्माण के निर्णयों के परिपालन पर भी एक प्रस्ताव स्वीकार किया। रिपोर्ट के मसौदे को कांग्रेस के सामने पेश किए जाने से महीनों पहले वितरित कर दिया गया था और उस पर पार्टी में विशद बहस हुई थी। मसौदे पर करीब 2 करोड़ 60 लाख टिप्पणियां, सुझाव आदि प्राप्त हुए थे, जिन पर विचार किए जाने के बाद ही, रिपोर्ट को कांग्रेस द्वारा अपनाया गया था। रिपोर्ट में कुछ खास सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों को हासिल करने में विफलता को दर्ज किया गया था, खासतौर पर देश का औद्योगीकरण करने में विफलताओं को और बढ़ती आर्थिक असमानताओं को भी दर्ज किया गया था। राजनीतिक विचारधारा, नैतिकता व जीवन स्तर में गिरावट और लाल फीताशाही, भ्रष्टाचार तथा फिजूलखर्ची की पहचान, ऐसी प्रमुख बुराइयों के तौर पर की गयी थी, जिनका मुकाबला किए जाने की जरूरत है।

वियतनाम के प्रधानमंत्री ने, चीन के प्रधानमंत्री के आमंत्रण पर हाल ही में चीन का दौरा किया था। वार्ताओं व बैठकों के दौरान, वियतनामी तथा चीनी नेता इस पर व्यापक रूप से साझा समझ पर पहुंचे कि वियतनाम-चीन चौतरफा

रणनीतिक सहकारी साझेदारी को बढ़ाया जाए। उन्होंने साझा चिंतावाले अंतर्राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय मुद्दों पर आपस में विचारों का आदान-प्रदान किया। दोनों पक्ष इस पर सहमत हुए कि समुद्र-संबंधित मुद्दों के निपटारे का मार्गदर्शन करने वाले बुनियादी सिद्धांतों पर द्विपक्षीय समझौते को गंभीरता से लागू किया जाए। वियतनाम तथा चीन इसके लिए वचनबद्ध हुए कि कूटनीतिक व कानूनी प्रक्रियाओं का आदर करेंगे, समझौते करने के लिए परामर्श तथा वार्ताएं करेंगे और जल्द ही दक्षिण चीन सागर में एक आचार संहिता (सीओसी) बनाएंगे ताकि विवादों को जटिल बनाने या बढ़ाने वाले कदमों से बचा जा सके और शांति व स्थिरता बनाए रखी जा सके।

कोरियाई जनवादी गणराज्य: कोरियाई जनवादी गणराज्य (डीपीआरके) या उत्तरी कोरिया, अपने खिलाफ थोपी गयी कठोर आर्थिक पाबंदियों के चलते अलग-थलग बना हुआ है। इस दौर में कोरियाई जनवादी गणराज्य ने मिसाइलों, नाभिकीय शस्त्रों का परीक्षण किया है तथा उपग्रह छोड़े हैं, जो इस क्षेत्र में बढ़ते सैन्य तनावों को प्रतिबिंबित करता है। इस क्षेत्र में बढ़ते तनावों ने, छ: देशों की शांति वार्ताओं और कोरियाई प्रायद्वीप के शांतिपूर्ण पुनरेकीकरण को, करीब-करीब परे ही खिसका दिया है।

लातीनी अमरीका

अपनी 20वीं कांग्रेस के विचारधारात्मक प्रस्ताव में हमने दर्ज किया था कि लातीनी अमरीका में वामपंथी ताकतों की प्रगति दुनिया की साम्राज्यवादविरोधी तथा नवउदारवादविरोधी ताकतों के प्रेरणा का एक स्रोत है। बहरहाल, इस संदर्भ में हमने यह भी दर्ज किया था:

''लातीनी अमरीका के अनेक देशों में जनतांत्रिक चुनावों में जीत के बल पर वामोन्मुखी या पूंजीवादी सरकारें सत्ता में आयी हैं। इन देशों में जो वामोन्मुखी गठबंधन उभर कर आए हैं, जिनमें क युनिस्ट पार्टियां भी शामिल हैं, पूंजीवाद के दायरे में रहते हुए, साम्राज्यवादी विश्वीकरण तथा नवउदारवाद का विकल्प मुहैया करा रहे हैं। हालांकि, ये सरकारें समाजवादी विकल्प पेश नहीं करती हैं, ये सरकारें उस 'मनोगत कारक' के विकास में सकारात्मक प्रगति का प्रतिनिधित्व करती हैं, जो साम्राज्यवाद तथा नवउदारवादी पूंजीवाद के खिलाफ निर्णायक चुनौती पेश कर सकता है।''

पुन: ऐसी सरकारों के भविष्य के संबंध में हमने यह भी कहा था:

''इसलिए, लातीनी अमरीका में साम्राज्यवादी चुनौतियों का सामना करते रहने तथा उन पर काबू पाने में ऐसी सरकारों की सफलता इस पर निर्भर करेगी कि वे किस तरह से, 'राजनीति की सर्वोच्चता' बनाए रखने की अपनी दृढ़ता कायम रखते हैं, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उनकी आर्थिक नीतियां राजनीति से नियंत्रित होती रहें और इस तरह साम्राज्यवाद की राजनीतिक तथा आर्थिक जरूरतों को शिकस्त देते रहा जा सके, जो इन देशों की घरेलू नीतियों के साम्राज्यवाद के वर्चस्ववादी मंसूबों के अनुरूप मोड़े जाने का तकाजा करती हैं।''

पिछले एक वर्ष के दौरान लातीनी अमरीका में गंभीर धक्के लगे हैं जिनसे पिछले दो दशकों में वामपंथी ताकतों ने वहां जो प्रगति की थी, उसके लिए खतरा पैदा हो गया है। दक्षिणपंथी ताकतें आज हमलावर हैं। हाल में हुए चुनावों में इस क्षेत्र के अनेक देशों में वामपंथी ताकतों को धक्का लगा है। अर्जेंटीना में 2015 में हुए चुनाव में दक्षिणपंथी, 51.4 फीसद वोट हासिल कर जीत गए। इसके फौरन बाद, अतीत की उपलब्धियों को पलटते हुए, मुक्त बाजारवादी सुधार शुरू

कर दिए गए जिनमें और ज्यादा निजीकरण करना तथा अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संगठनों से दोबारा रिश्ते कायम करना शामिल था। यह अमरीकी साम्राज्यवादी दबदबे के खिलाफ इस महाद्वीप की वामपंथी ताकतों के एकीकरण को आगे ले जाने के प्रयासों के लिए एक गंभीर धक्का है। ब्राजील की राष्ट्रपति डिल्मा रूसेफ को हाल ही में महाभियोग चलाकर हटा दिया गया है। सत्ताधारी अल्पतंत्र ने कार्पोरेट मीडिया तथा पुलिस व न्याय तंत्र के कुछ हिस्सों की मदद से और अमरीकी साम्राज्यवाद के पूरे-पूरे समर्थन से, इस लक्ष्य को हासिल किया है। बोलीविया में राष्ट्रपति इवो मोरालेस की तीसरे कार्यकाल की अनुमति के जनमतसंग्रह में हार हो गयी। वेनेजुएला में दक्षिणपंथी ताकतों ने 2015 के नवंबर में हुए संसदीय चुनाव में जबर्दस्त जीत हासिल की है। इसके बाद से वेनेजुएला में मडुरो के राष्ट्रपतित्व को अस्थिर करने की सुनियोजित कोशिशें चल रही हैं। तीव्र आर्थिक संकट, तेल की कीमतों में तीखी गिरावट, खाने-पीने की तथा आवश्यक वस्तुओं की तंगी ने, संसदीय चुनाव में अमरीका-समर्थित दक्षिणपंथी ताकतों की जीत में मदद दी थी।

ये तमाम घटनाविकास उस प्रगतिशील, गैर-नवउदारवादी विकल्प के गंभीर तरीके से पीछे धकेले जाने की ओर इशारा करते हैं, जिसे ये लातीनी अमरीकी देश पेश कर रहे थे। यह अमरीकी साम्राज्यवादी बोलबाले के विरोध में, इस महाद्वीप के प्रगतिशील एकीकरण के लिए भी एक बड़ा धक्का है। अब मर्कोसूर, सेलेक (सीईएलएसी), उनासूर आदि, उन क्षेत्रीय मंचों का भविष्य खतरे में पड़ गया है, जिन्हें साम्राज्यवादी बोलबाले के प्रतिरोध के मंचों के रूप में गठित किया गया था।

बढ़ता प्रतिरोध

अमरीकी साम्राज्यवाद द्वारा उत्प्रेरित, उससे सहायता-प्राप्त तथा बढ़ावा पा रही वामपंथविरोधी ताकतों की इस तरह की कामयाबियां भी कोई चुनौतीविहीन नहीं बनी रही हैं। लातिनी अमरीका में दक्षिणपंथी राजनीतिक ताकतों के बढ़ते हमलों को चुनौती भी दी जा रही है। प्रगतिशील, वामपंथी ताकतों के नेतृत्व में जनता गोलबंद हो रही है और इन हमलों के खिलाफ सड़कों पर उतर कर प्रदर्शन कर रही है। वेनेजुएला में गड़बड़ी फैलाने की विपक्ष की कोशिशों के खिलाफ चाविस्टाओं ने देश भर में विशाल प्रदर्शन आयोजित किए हैं। इसी प्रकार, ब्राजील में भी महाभियोग की कार्रवाई के खिलाफ और इसे त तापलट करार देते हुए, व्यापक स्तर पर डिल्मा-समर्थक विरोध कार्रवाइयां हुई हैं। अर्जेंटीना के राष्ट्रपति द्वारा लागू की जा रही नवउदारवादी नीतियों को भी मजदूरों के तथा समाज के अन्य तबकों के प्रतिरोध का सामना करना पड़ रहा है।

कोलंबिया में शांति

कोलंबिया की सरकार और रिवोल्यूशनरी आ र्ड फोर्सेज़ ऑफ कोलंबिया-पीपुल्स आर्मी (एफएआरसी-ईपी) के बीच कोलंबिया में, 'टकराव खत्म करने तथा उपयुक्त व टिकाऊ शांति का निर्माण करने पर एक अंतिम, पूर्ण तथा निश्चयात्मक समझौता' हो गया है। 24 अगस्त 2016 को हवाना में इस समझौते का एलान किया गया। उ मीद की जाती है कि इसके साथ, कोलंबिया में आधी सदी से ज्यादा से चले आ रहे सशस्त्र टकराव का अंत हो जाएगा। क्यूबा और नार्वे ने, सह-गारंटीकर्ताओं के रूप में इस समझौते पर दस्तखत किए हैं। बहरहाल, अंतिम रूप से यह समझौता तभी लागू

होगा जब इस समझौते पर, एक जनमत संग्रह के जरिए, कोलंबिया की जनता अपने अनुमोदन की मोहर लगा देगी। अगर यह प्रक्रिया पूरी हो जाती है तो इसे लातीनी अमरीका के लिए एक बहुत भारी सकारात्मक घटनाविकास माना जाएगा। इस समूची प्रक्रिया में समाजवादी क्यूबा ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की है।

अफ्रीका

अफ्रीका के अनेक देशों में सामाजिक तथा आर्थिक अस्थिरता का गहराना जारी है। यह सबसे बढ़कर लगातार जारी साम्राज्यवादी दखलंदाजियों और उसके द्वारा इस महाद्वीप मे विभिन्न आतंकवादी संगठनों को दिए जा रहे समर्थन की वजह से हो रहा है।

पांच साल पहले, साम्राज्यवादियों द्वारा उत्प्रेरित असाध्य गृहयुद्ध के चलते, सूडान के उत्तरी तथा दक्षिणी हिस्से बंटकर, दो अलग देश बन गए थे। अब इस तरह नया-नया गठित दक्षिण सूडान भी एक नये गृहयुद्ध के कगार पर है। पिछले महीने देश के अधिकांश हिस्से में हिंसा फूट पड़ी और इस तरह वह शांति समझौता जिससे देश का विभाजन कराने वाले गृहयुद्ध के खत्म हो जाने की उ मीद की जा रही थी, व्यावहारिक मानों में खत्म ही हो गया। नाइजीरियाई आतंकी गुट बोको हराम के नृशंस हिंसक हमलों के करीब दो साल बाद, नाइजीरिया अब देशव्यापी अकाल के मुंहाने पर खड़ा है। हालात इतने गंभीर हैं कि यूनिसेफ के अनुसार, अगर फौरन खाद्य सहायता नहीं मिली तो करीब 50 हजार बच्चे भूख से दम तोड़ देंगे। इस देश के एक प्रांत में करीब 2 लाख 50 हजार लोग गंभीर कुपोषण के शिकार हैं। करीब 44 लाख लोग इस संकट की चपेट में आए बताए जाते हैं। इनमें से आधे ऐसे इलाकों में हैं जो मानवतावादी एजेंसियों की पहुंच से ही बाहर हैं। सोमालिया में अतिवादी हिंसा जारी है और राजधानी मोगदिशू तथा अन्य प्रमुख शहरों में आतंकी हमले हो रहे हैं। सोमालिया के विभिन्न हिस्सों में संयुक्त राष्ट्र संघ समर्थित अफ्रीकी यूनियन सेनाओं और इथियोपियाई सेनाओं से, शबाब अतिवादी टक्कर ले रहे हैं। गेबोन तथा जाि बया जैसे दूसरे कई देशों में भी, हाल में हुए चुनावों में बड़े पैमाने पर फर्जीवाड़े तथा अनियमितताओं के आरोपों के बाद से, अस्थिरता और गहरी हुई है।

खुद दक्षिण अफ्रीका में हुए स्थायी निकायों के चुनावों में अफ्रीकी राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्ववाले सत्ताधारी गठबंधन का समर्थन, 1994 में रंगभेदी निजाम के खत्म किए जाने के बाद हुए पहले चुनाव के समय से अपने सबसे निचले स्तर पर चला गया है। हालांकि, सत्ताधारी गठबंधन को 52 फीसद वोट मिले हैं, फिर भी यह उसके समर्थन में भारी गिरावट को दिखाता है। बढ़ती बेरोजगारी, वास्तविक मजदूरी में गिरावट और सबके लिए आवास के वादे की अनदेखी के चलते, लोगों ने उसके खिलाफ वोट डाले हैं।

जैसाकि हमने पहले भी अनेक मौकों पर विश्लेषण कर कहा है, संकट के दौर में या तो वामपंथी ताकतें इससे उत्पन्न होने वाले असंतोष को संगठित संघर्षों के रास्ते पर ले जाने में कामयाब रहती हैं या फिर दक्षिणपंथी ताकतें जनता के उसी असंतोष का खुद आगे बढ़ने के लिए इस्तेमाल करने में कामयाब हो जाती हैं। ऐसे मौकों पर प्रबल जन संघर्ष छेड़ने और जनता के इन लोकप्रिय संघर्षों को नेतृत्व मुहैया कराने में, संबंधित देशों में क युनिस्ट तथा वामपंथी पार्टियों की मौजूदगी व शक्ति एक महत्वपूर्ण कारक साबित होती है। यह स्पष्ट है कि इस दौर में क युनिस्ट तथा वामपंथी पार्टियां

ज्यादा से ज्यादा अपने चुनावी प्रभाव को बनाए रखने में ही कामयाब रही हैं, जोकि जनसंघर्षों को वामपंथ के पीछे गोलबंद करने के लिए काफी नहीं है।

हमारा पास-पड़ौस

हमारे आस-पड़ौस का घटनाक्रम मोटे तौर पर उन्हीं निष्कर्षों की पुष्टि करता है, जो हमने अपनी 21वीं कांग्रेस में निकाले थे। भापजा के राज के इस दो वर्षों में, इस सरकार द्वारा अपनायी गयी विदेश नीतिगत दिशा के चलते, अपने पड़ौसी देशों के साथ हमारे संबंधों में खटास पड़ी है।

नेपाल में आखिरकार 2015 के सितंबर में एक धर्मनिरपेक्ष, जनतांत्रिक तथा गणतंत्रात्मक संविधान स्वीकार किया गया। राजशाही के उखाड़ फैंके जाने के बाद गुजरे दस साल में, वहां नौ सरकारें बनी हैं, जो देश में चल रही राजनीतिक अस्थिरता को दिखाता है। इस अस्थिरता ने संविधान के अपनाए जाने की प्रक्रिया में बहुत भारी देरी करायी है। मधेसी पार्टियां, जो इस संविधान के कुछ पहलुओं पर आपत्ति कर रही थीं, संविधान के अनुमोदन के लिए मतदान की प्रक्रिया में शामिल नहीं हुईं और उन्होंने बड़े पैमाने पर विरोध कार्रवाइयां संगठित कीं। संविधान के अपनाए जाने के बाद, पहले से तय प्रक्रिया के अनुसार, नेपाल की क युनिस्ट पार्टी (एकीकृत मार्क्सवादी-लेनिनवादी) या सीपीएन-यूएमएल के नेतृत्व में सरकार का गठन हुआ। प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति, दोनों इसी पार्टी के थे। चंद महीनों में ही इस सरकार को संसद में बहुमत का समर्थन गंवा देने के बाद, इस्तीफा देना पड़ा। उसके बाद पुष्प दहल प्रचंड के नेतृत्व में, नेपाल की क युनिस्ट पार्टी (माओवादी सेंटर) या सीपीएन-एमसी ने नेपाली कांग्रेस के समर्थन से प्रधानमंत्री पद की शपथ ली। नये-नये अपनाए संविधान के प्रावधानों के अनुसार फौरन ही राष्ट्रीय, प्रांतीय तथा स्थानीय चुनाव कराए जाने चाहिए। लेकिन, इसमें बहुत अनिश्चितता नजर आती है। नेपाली जनता के बीच आम तौर पर यह धारणा बनी है कि रास्ता जाम कराने के लिए, जिससे नेपाल के लिए व्यापार तथा मालों की आवाजाही बाधित हुई थी, भारत जि मेदार था, हालांकि भारत सरकार इससे इंकार करती है। इन्हीं सब कारणों से, जिनके साथ जनता की रोजी-रोटी की समस्याओं को हल करने में एक के बाद एक आयी सरकारों की विफलता भी जुड़ जाती है, नेपाली जनता के बीच असंतोष तथा मोहभंग पैदा हो रहा है। राजशाही-समर्थक ग्रुपों तथा दक्षिणपंथी ताकतों द्वारा इन हालात का फायदा उठाने की कोशिशें की जा रही हैं।

नेपाल के नये प्रधानमंत्री की भारत यात्रा के जरिए, जिसका हमारी केंद्रीय कमेटी की बैठक की पूर्व-संध्या में ही समापन हुआ था, नेपाल ने भारत को यह संकेत देने की कोशिश की थी कि अब भी वही नेपाल का सबसे घनिष्ठ मित्र तथा सहयोगी है। यह अपने आप में महत्वपूर्ण है क्योंकि नेपाल की क युनिस्ट पार्टी (माओवादी) ने निकट अतीत में ही तीखा भारतविरोधी अभियान चलाया था। इस यात्रा के परिणामों का अंतिम रूप से आकलन तो तमाम विवरण उपलब्ध होने के बाद ही किया जा सकेगा।

बांग्लादेश में धार्मिक तत्ववादी ताकतें और आतंकवादी संगठन बहुत ही सक्रिय हो गए हैं। उन्होंने अनेक धर्मनिरपेक्ष लेखकों तथा ब्लॉगरों को निशाना बनाया है। वे आतंकवादी हरकतें भी कर रहे हैं, जिनमें सैकड़ों लोगों की जानें गयी हैं। बांग्लादेश की सरकार ने बांग्लादेश की मुक्ति के युद्ध के दौरान किए गए युद्ध अपराधों के लिए अनेक

इस्लामवादी नेताओं पर मुकद्दमे चलाने का जो फैसला लिया है, उससे यह हिंसक प्रतिक्रिया भड़की है। वहां अतिवादी तथा आतंकवादी ताकतों के बढ़ने का असर छलककर हमारे देश तक और खसतौर पर सीमावर्ती राज्यों में आता है। तत्ववादियों के खिलाफ कार्रवाई करने तथा उन्हें सजा दिलाने की बांग्लादेश सरकार की कोशिशें सराहनीय हैं। लेकिन, उसे यह भी सुनिश्चित करना होगा कि ये तत्ववादी तथा आतंकवादी ताकतें, जनता के बीच पैदा हो रहे आर्थिक असंतोष का फायदा न उठा सकें और इसके जरिए देश की पहले ही तनाव झेल रही धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक व्यवस्था को तोड़ न सकें।

पाकिस्तान में हालात नाजुक बने हुए हैं। इस देश का एक बड़ा हिस्सा धार्मिक तत्ववादी ताकतों के प्रभाव में है। आतंकवादी हमलों में निर्दोष लोगों की जानें जाने का सिलसिला जारी है। सैन्य प्रतिष्ठान का देश के मामलों में हस्तक्षेप करना जारी है। कश्मीर की मौजूदा अशांति से पाकिस्तान को दखलंदाजी करने का और मुद्दे का अंतर्राष्ट्रीयकरण करने का और ज्यादा मौका मिल रहा है। इस भाजपा सरकार की अभी गरम, अभी नरम नीति के चलते, भारत-पाकिस्तान रिश्ते और बिगड़ने का खतरा है।

अफगानिस्तान में तालिबान एक बार फिर जड़ें जमा रहे हैं। अफगानिस्तान के अंदरूनी मामलों में अमरीका का महत्वपूर्ण भूमिका निभाना जारी है।

मालदीव, 2012 की फरवरी में, पहले जनतांत्रिक तरीके से निर्वाचित नेता, मोह मद नाशीद के त तापलट के बाद से अशांत बना रहा है। बहुत ही विवादास्पद चुनाव के बाद सत्ता में आए, अब्दुल्ला यासीन ने नाशीद को 13 साल के लिए जेल में डलवा दिया। वह असहमत की आवाजों को कुचलने के लिए अंतर्राष्ट्रीय निंदा झेल रहा है। देश में रैडीकल इस्लाम उभार पर है और पिछले एक साल में मौजूदा राष्ट्रपति ने विपक्षी पार्टियों के नेताओं के अलावा अपने ही उपराष्ट्रपति, रक्षा मंत्री तथा पुलिस प्रमुख को जेल में डलवा दिया है।

श्रीलंका में, श्रीलंका फ्रीडम पार्टी तथा यूनाइटेड नेशनल पार्टी की राष्ट्रीय एकता सरकार ने एक नया संविधान तैयार करने के लिए एक संचालन समिति का गठन किया है। इसकी आलोचना हो रही है कि यह कमेटी, जनता के सभी तबकों के राजनीतिक विचारों को प्रतिबिंबित नहीं करती है। इस नये संविधान को 2016 के नवंबर में संसद से अनुमोदित कराना होगा और 2017 की जनवरी में इस पर जनमतसंग्रह कराया जाना है।

2015 के सितंबर की संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट ने दिखाया है कि कई दशक लंबे गृह युद्ध के दौरान, ''गंभीर उल्लंघनों के पैटर्न'' देखने को मिले थे। रिपोर्ट में इस दौरान हुए अपराधों की जांच करने के लिए विदेशी मजिस्ट्रेटों समेत विशेष अदालतों के गठन की मांग की गयी है। इस रिपोर्ट में इसकी भी सिफारिश की गयी है कि ''न्याय की दिशा में एक जरूरी कदम के तौर पर'' एक मिली-जुली अदालत गठित की जाए, जिसमें अंतर्राष्ट्रीय न्यायाधीशों, अभियोजकों, वकीलों, जांचकर्ताओं को भी शामिल किया जाए। नयी राष्ट्रीय एकता सरकार के गठन के फौरन बाद आयी संयुक्त राष्ट्र संघ की इस रिपोर्ट में एक सत्य तथा सुलह-सफाई आयोग का गठन करने तथा आपराधिक न्याय तंत्र स्थापित करने व पीड़ितों की क्षतिपूर्ति करने के अन्य प्रस्तावों की अपनी योजनाओं की रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है।

यांमार में 1962 के बाद आयी पहली जनतांत्रिक रूप से निर्वाचित सरकार की नेता, आंग सांग सू ची ने, जिन्हें आधिकारिक तौर पर ''स्टेट काउंसिलर ऑफ यांमार'' का पद दिया गया है, यांमार में पीढ़ियों से बसे रोहंगिया मुसलमानों को नागरिकों के रूप में मान्यता देने पर अपना विरोध स ती से दोहराया है। रोहंगिया नागरिकता और पूजा

करने, शिक्षा, विवाह, यात्रा आदि की स्वतंत्रता समेत, बुनियादी अधिकारों से वंचित हैं। 2012 की हिंसा में अपने घरों से खदेड़ दिए गए एक लाख से ज्यादा रोहंगिया पुनर्वास केंपों में ही बने हुए हैं। बौद्ध भिक्षु उन पर बंगाली होने का आरोप लगाते हैं, जिसका निहितार्थ यह है कि वे सीमा पार से आए अवैध घुसपैठिए हैं। बौद्ध तत्ववादी ताकतों द्वारा रोहंगियाओं पर हमले अब भी जारी हैं।

सर्वहारा अंतर्राष्ट्रवाद

अंतर्राष्ट्रीय क युनिस्ट आंदोलन

क युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियां अनेक देशों में काम कर रही हैं, हालांकि उनकी ताकत सीमित ही है। ग्रीस, रूस, पुर्तगाल, चैक गणराज्य, साइप्रस, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील, नेपाल तथा जापान जैसे कुछ पूंजीवादी देशों में ये पार्टियां एक महत्वपूर्ण राजनीतिक ताकत हैं। ज्यादातर क युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियां अपने-अपने देशों के संबंध में जानकारियों, रायों तथा अनुभवों का आदान-प्रदान करने के लिए साल में एक बार मिलकर बैठती हैं। 1993 में हमने समकालीन विश्व स्थिति पर सेमिनार का आयोजन करने के जरिए जो पहल की थी उसने, सोवियत संघ के पराभव के बाद तमाम प्रमुख क युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियों को एकजुट करने में मदद की। चूंकि इस प्रक्रिया में शामिल हुई सभी पार्टियों को यह पहल उपयोगी लगी, इस तरह की बैठकों में नियमित रूप से मिलने का प्रस्ताव रखा गया। 1999 से ग्रीस की क युनिस्ट पार्टी (केकेई) ने इसकी पहल की और क युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियों की सालाना अंतर्राष्ट्रीय बैठक (आइएमसीडब्ल्यूपी) का आयोजन शुरू कर दिया। इस शृंखला की पहली सात बैठकें, ग्रीस में एथेंस में हुईं। बाद में हमारे इस सुझाव पर कि ये बैठकें सभी महाद्वीपों में होनी चाहिए, विभिन्न देशों में ये बैठकें आयोजित की गयी हैं। इस सिलसिले की 11वीं बैठक, हमारे देश में हमारी और सी पी आइ की संयुक्त मेजबानी में हुई थी। यह प्रस्ताव है कि आइएमसीडब्ल्यूपी की 2017 में होने वाली बैठक, जो रूस में होने जा रही है, अक्टूबर क्रांति की शताब्दी का पालन करने वाली बैठक हो।

दुनिया के विभिन्न हिस्सों में इसकी कोशिशें हो रही हैं कि क युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियों की ऐसी बैठकों को एक ढांचा मुहैया कराया जाए। मिसाल के तौर पर बाल्कान क्षेत्र में, योरपीय क्षेत्र में क युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियों की बैठकें नियमित रूप से होती हैं। लातीनी अमरीका में अनेक क युनिस्ट पार्टियां नये वामपंथी आंदोलनों तथा शक्तियों के साथ घनिष्ठ रिश्ते कायम कर काम कर रही हैं और ये पार्टियां भी नियमित रूप से मिलकर बैठती हैं। अफ्रीका में भी दक्षिण अफ्रीकी क युनिस्ट पार्टी (एसएसीपी) ने विभिन्न वामपंथी ग्रुपों, पार्टियों को एकजुट करने के लिए पहल की है। लातीनी अमरीका में वामपंथी ताकतों की ऐसी बैठकों के आयोजन की लंबी परंपरा है, जैसे साओ पोलो फोरम। लेकिन, हमारे क्षेत्र में क युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियों की ऐसी बैठकें/ स मेलन नहीं होते हैं। हमारी पार्टी से इसका तकाजा किया जा रहा है कि इस तरह की पहल करे और सार्क क्षेत्र की विभिन्न क युनिस्ट पार्टियों तथा वामपंथी ताकतों को एकजुट करे।

मजदूर वर्ग के संघर्ष

इस दौर में दुनिया भर में श्रम तथा पूंजी के बीच का अंतर्विरोध या कहा जाए कि मेहनतकश जनता और तमाम पूंजीवादी देशों के सत्ताधारियों के बीच का अंतर्विरोध तीखा हुआ है। जर्मनी में 2015 का साल अमरीकी भीमकाय कार्पोरेट कंपनी, अमेजन के भंडारगृह में हड़तालों के साथ समाप्त हुआ। लु तहंसा एअरलाइन्स कर्मियों की तथा बड़ी सं या में सार्वजनिक क्षेत्र मजदूरों की औद्योगिक कार्रवाइयां और डाककर्मियों की तथा किंडरगार्टन व नर्सरी स्कूलों के शिक्षकों की कार्रवाइयां, जर्मनी को हिला रही हैं। अमरीका में ऑटोमोबाइल, इस्पात तथा तेल उद्योगों में मजदूर वर्ग की कार्रवाइयां हुई हैं। ग्रीस में रेलकर्मियों ने पांच दिन की हड़ताल की थी। इसी प्रकार दुनिया के अनेक हिस्सों में बड़ी-बड़ी विरोध कार्रवाइयां हुई हैं। इस दौर की मील का पत्थर कहलाने वाली मजदूर वर्ग की कार्रवाई थी, कमखर्ची के कदमों के खिलाफ पेरिस में हुआ मजदूरों का विशाल प्रदर्शन, जिसने अपनी ओर सारी दुनिया का ध्यान खींचा। इस प्रदर्शन में दस लाख से ज्यादा लोगों ने हिस्सा लिया।

हालांकि, कमखर्ची के कदमों के खिलाफ योरप भर में बड़ी-बड़ी विरोध कार्रवाइयां हुई हैं और योरपीय राजधानियों में अभूतपूर्व रूप से बड़ी जन-गोलबंदियां हुई हैं, ये संघर्ष अपनी प्रकृति में रक्षात्मक ही बने रहे हैं। ये संघर्ष इस माने में रक्षात्मक रहे हैं कि इनमें मु य लक्ष्य आजीविका के मौजूदा स्तरों की रक्षा करने तथा कठिन लड़ाइयों के बाद जीते गए मेहनतकश जनता के वर्तमान अधिकारों की हिफाजत करना ही रहा है। बहरहाल, ये संघर्ष साम्राज्यवाद के खिलाफ तथा पूंजीवादी शोषण के तीखा किए जाने के खिलाफ और बड़े प्रतिरोध के लिए आधार मुहैया कराते हैं।

इन परिस्थितियों में, जैसाकि हम पीछे जिन घटनाविकासों की चर्चा कर आए हैं उनसे पता चलता है, अपनी 20वीं तथा 21वीं कांग्रेसों में हम जिन नतीजों पर पहुंचे थे, अब भी वैध बने हुए हैं। जब तक क युनिस्ट पार्टियों तथा वामपंथी ताकतों द्वारा जनता के बढ़ते असंतोष को संगठित करने व संघर्षों को तेज करने के जरिए और पूंजी के शासन के खिलाफ मजदूर वर्ग के नेतृत्व में हमला बोलने के जरिए, पूंजीवाद के राजनीतिक विकल्प को मजबूत नहीं किया जाता है, पूंजी के निर्मम शोषण को चुनौती नहीं दी जा सकेगी।

निष्कर्ष

कुल मिलाकर दुनिया का उक्त तमाम घटनाविकास इसी तथ्य की पुष्टि करता है कि अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय पूंजी के नेतृत्व में चल रहा वैश्वीकरण, अपने नवउदारवादी एजेंडा के साथ, दुनिया भर में मेहनतकश जनता पर लगातार बढ़ता हुआ बोझ लादना जारी रखे हुए है। चालू आर्थिक मंदी पर काबू पाने की कोशिश में, अपना विश्व वर्चस्व और मजबूत करने की अमरीकी साम्राज्यवाद की कोशिशों का स्वाभाविक रूप से दुनिया के विभिन्न क्षेत्रों में अस्थिरताकारी असर हो रहा है। अपने वर्चस्व को मजबूत करने की अमरीका की कोशिशें बुनियादी तौर पर योरप में रूसी प्रभाव की काट करने और दुनिया पर अमरीकी प्रभुत्व की संभावित काट के तौर पर चीन के विकास की घेराबंदी करने पर टिकी हुई हैं।

अंतर्राष्ट्रीय क युनिस्ट आंदोलन का एक दस्ता होने के नाते सी पी आइ (एम) को, भारत में खुद के मजबूत बनाने के जरिए और इस हमले की आर्थिक, राजनीतिक व अन्य अभिव्यक्तियों के खिलाफ भारतीय जनता के जनसंघर्षों को और व्यापक व ताकतवर बनाने की अपनी सामर्थ्यों में भारी बढ़ोतरी करने के जरिए, इस विश्व संघर्ष में अपना योगदान देना है।

राष्ट्रीय परिस्थिति

चूंकि केंद्रीय कमेटी की जून 2016 की बैठक में हमने कुछ महत्वपूर्ण राष्ट्रीय राजनीतिक घटनाक्रमों को दर्ज किया था, यहां हम उसके बाद से राष्ट्रीय परिस्थितियों में हुए कुछ प्र ुख घटनाविकासों पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं।

जहां तक जनता की रोजी-रोटी का सवाल है, इस दौर में कुल मिलाकर चौतरफा गिरावट ही आयी है। अर्थव्यवस्था का और गहरे संकट में धंसना जारी है, जिससे हमारी जनता के विशाल बहुमत पर और भारी बोझ पड़ रहे हैं। देश की विदेश नीति की हालत खस्ता है और महत्वपूर्ण रूप से हमारे सामाजिक ताने-बाने को बड़ी कोशिश से छिन्न-भिन्न करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

जनता पर बढ़ते आर्थिक बोझ

इस सरकार के ऊंची वृद्धि दर के दावों के बावजूद--अब सरकारी अनुमान के अनुसार इस साल वृद्धि दर 7.1 फीसद रहने जा रही है--जमीनी सचाइयां कुछ और ही कहती हैं। इन आंकड़ों के संदिग्ध होने की बात, हम तो पहले ही कह रहे थे, अब अंतर्राष्ट्रीय एजेसियों द्वारा उसकी पुष्टि की जा रही है। ***द फाइनेंशियल टाइ स*** ने कहा है कि भारत के सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर, उसके पहले वाले माप के हिसाब से 4.3 फीसद होनी चाहिए न कि नये मापदंड के अनुसार भाजपा की सरकार द्वारा बतायी जा रही, 7.1 फीसद।

ताजातरीन आंकड़े दिखाते हैं कि भारत का औद्योगिक क्षेत्र गहरे संकट की गिर त में है। जुलाई के महीने में औद्योगिक उत्पादन सूचकांक ने ऋण में 2.4 फीसद की वृद्धि दर्ज करायी थी। विनिर्माण क्षेत्र ने, जो रोजगार मुहैया कराने के लिए खासतौर पर महत्वपूर्ण है, 3.4 फीसद की ऋणात्मक वृद्धि दर दर्ज करायी। कुल 22 में से 12 प्रमुख विनिर्माण उद्योगों में वृद्धि में शुद्ध गिरावट दर्ज हुई। भविष्य के लिए इससे भी बदतर यह है कि पूंजी मालों के उत्पादन में भारी गिरावट हुई है और जुलाई के महीने में 29.5 फीसद की ऋणात्मक वृद्धि दर्ज हुई, जबकि जून के महीने में यह वृद्धि दर ऋणात्मक 16.5 फीसद से स्तर पर थी। पूंजी मालों के उत्पादन में गिरावट का मतलब यह है कि कोई नये निवेश हो ही नहीं रहे हैं।

औद्योगिक क्षेत्र के संकट को अर्थव्यवस्था के विभिन्न महत्वपूर्ण क्षेत्रों के प्रदर्शन से देखा जा सकता है। 2016 के पहले छ: महीनों में बिजली उत्पादन में, जोकि औद्योगिक गतिविधि के स्तर का एक प्रमुख सूचक है, 9 फीसद की बढ़ोतरी हुई थी। जुलाई में यह वृद्धि घटकर 1.6 फीसद रह गयी और अगस्त में 0.15 फीसद ही रह गयी। केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण के अनुसार यह बिजली उत्पादन पिछले सात साल में सबसे धीमी वृद्धि है। ऐसे ही हालत समूचे ऊर्जा क्षेत्र में है। रेलवे गंभीर संकट में है। 2016 की जुलाई में उसकी माल भाड़े से आय में 9.68 फीसद की कमी हुई थी। यह मालों की आवाजाही में कुल मिलाकर गिरावट को दिखाता है, जोकि औद्योगिक मंदी का संकेतक है। राजस्व में इस घाटे की भरपाई करने के लिए, यात्रियों पर बोझ बढ़ाया जा रहा है। इस दिशा में ताजातरीन कदम है, रेलवे द्वारा शुरू की गयी 'सर्ज प्राइसिंग', जो वास्तव में 90 फीसद यात्रियों के लिए किरायों में भारी बढ़ोतरी किए जाने के सिवा और कुछ नहीं है।

उद्योगों के इस संकट को इस तथ्य से भी देखा जा सकता है कि उद्योगों के लिए बैंक ऋण गिरकर अपने सबसे निचले स्तर पर पहुंच गए हैं। इस सब का रोजगार निर्माण पर असर पड़ रहा है।

सरकार ने संसद में आधिकारिक रूप से यह स्वीकार किया था कि 2015 में प्रमुख उद्योगों में 1 लाख 35 हजार नये रोजगार पैदा हुए थे। यह तब है कि जबकि हर साल 1 करोड़ 30 लाख नये युवा रोजगार के लिए बाजार में उतरते हैं। याद रहे कि मोदी ने अपने प्रचार अभियान के क्रम में हर साल 2 करोड़ नये रोजगार दिलाने का वादा किया था।

कृषि संकट

कृषि संकट का गहरा होना जारी है। ग्रामीण वास्तविक मजदूरी अब भी ऋणात्मक दिशा में चल रही है यानी 2015 के अक्टूबर से शुद्ध गिरावट को दिखा रही है। सूखे के साल में ऐसा होने का मतलब है, ग्रामीण बदहाली का और बढ़ जाना। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़े 2015 में, पिछले साल के मुकाबले कृषि बलवों में 327 फीसद की बढ़ोतरी दिखाते हैं। 2014 में ऐसे बलवों की सं या 628 थी।

किसानों की आत्महत्याओं में 40 फीसद की बढ़ोतरी का अनुमान है। 2014 में यह सं या 5650 थी, जो 2015 में बढ़कर 8,000 से ऊपर निकल गयी।

काश्त के कुल रकबे का घटना जारी है। काश्तकारों के लिए उत्पादन लागत लगातार बढ़ रही है और न्यूनतम समर्थन मूल्य में उस हिसाब से कोई बढ़ोतरी नहीं हो रही है। मोदी के चुनाव अभियान के दौरान किए गए वादे को याद करें कि कृषि लागत व मूल्य आयोग के आकलन के हिसाब से जो उत्पादन लागत बैठेगी, उससे डेढ़ गुना ज्यादा समर्थन मूल्य दिया जाएगा। इसी सब के चलते खाद्यान्न उत्पादन, केंद्रीय कमेटी की अपनी पिछली रिपोर्ट में हमने जो दर्ज किया था, उससे भी नीचे खिसकना जारी रखे हुए है।

इन हालात में सरकार हमारी विशाल ग्रामीण आबादी को कोई भी राहत देने से ही इंकार कर रही है। सुप्रीम कोर्ट के हस्तक्षेप कर यह मांग करने के बावजूद कि सूखा पीड़ितों को फौरन राहत दिलायी जाए, वास्तव में उन तक बहुत ही कम राहत पहुंच पायी है। पुन: सुप्रीम कोर्ट के हस्तक्षेप के बावजूद, मनरेगा को संसाधनों से वंचित रखा जा रहा है, जहां लोगों को उनकी वैध मजदूरी तक नहीं मिल पा रही है। मनरेगा के अंतर्गत आने वाले 21 करोड़ 80 लाख मजदूरों में से 10 करोड़ 98 लाख इसके तहत सक्रिय मजदूर हैं। भाजपा सरकार ने ऐसी नीति को लागू किया है कि सिर्फ आधारकार्डधारक ही सीधे अपने बैंक खातों के जरिए मजदूरी ले सकते हैं। लेकिन, कुल 8 करोड़ 70 लाख मनरेगा मजदूरों के पास ही आधार से जुड़े बैंक खाते हैं। बाकी को उनकी वैध मजदूरी तक नहीं दी जा रही है।

बैंकों को आधार से जुड़े नकदी हस्तांतरण में गंभीर खामियां हैं। बहुत सी जगहों पर लोगों को उनकी बुनियादी हकदारियों से वंचित किया जा रहा है। यह बड़ी सं या में लोगों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली से अपनी वैध आपूर्तियां हासिल करने से रोकता है। उंगलियों की छाप पढ़ने वाली मशीन, लोगों की उंगलियों की छाप सही तरीके से नहीं पहचान पाती है और इसलिए, इसके नाम पर बड़े पैमाने पर लोगों को राशन की आपूर्ति से वंचित रखा जा रहा है।

हम यह मांग करते आए हैं कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली को सार्वभौम बनाया जाए। यही एक तरीका है जिससे जनता के विशाल बहुमत तक आवश्यक वस्तुओं की न्यूनतम आपूर्तियां पहुंचना सुनिश्चित किया जा सकता है। यह भाजपायी सरकार हठपूर्वक इस दिशा में कदम उठाने से इंकार कर रही है।

महंगाई और बढ़ती बेरोजगारी

जनता पर बढ़ती बेरोजगारी और आवश्यक वस्तुओं की कीमतों में तथा खासतौर पर खाने-पीने की वस्तुओं की कीमतों में लगातार बढ़ोतरी का दोहरा हमला हो रहा है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार, अगस्त के महीने में शहरी बेरोजगारी 11.24 फीसद थी और ग्रामीण बेरोजगारी 9.18 फीसद। जैसाकि सभी जानते हैं, ये अनुमान बहुत ही त्रुटिपूर्ण हैं। स्वरोजगार के नाम पर बड़े पैमाने पर बेरोजगारी तथा अर्द्धबेरोजगारी को छुपाया जाता है। वास्तव में यह फीसद इससे कहीं ज्यादा होगा।

महंगाई के जरिए जनता पर लगातार बढ़ता हुआ बोझ डाला जा रहा है। थोक मुद्रास्फीति लगातार पांचवे महीने में बढ़ रही थी। अगस्त के महीने के लिए सरकारी तौर पर घोषित थोक मूल्य सूचकांक में बढ़ोतरी 3.74 फीसद बतायी गयी थी। खाद्य वस्तुओं की कीमत में 8.23 फीसद, दालों के दाम में 34.55 फीसद, आलू के दाम में 66.72 फीसद, चीनी के दाम में 35.36 फीसद बढ़ोतरी दर्ज हुई थी।

इस सचाई पर पर्दा डालने की नंगी कोशिश में सरकार द्वारा विकास के संबंध में हैरान कर देने वाले दावे किए जा रहे हैं। इस शृंखला में ताजातरीन है गरीबी का अनुमान, जो प्रधानमंत्री के चहेते नीति आयोग ने पेश किया है। वे इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि भारत में गरीबी का माप करना बहुत ही मुश्किल है। इसलिए, नीति आयोग ने सिफारिश की है कि सरकार गरीबी के माप के लिए एक और आयोग का गठन करे। इससे पहले, बहुत ही संदिग्ध किस्म की परिभाषाओं के आधार पर तेंडुलकर कमेटी ने 27 करोड़ भारतीयों के गरीबी में जी रहे होने का अनुमान लगाया था, जबकि रंगराजन कमेटी ने यह आंकड़ा 36 करोड़ 30 लाख बताया था। अब यह सरकार देश में गरीबी का कोई अनुमान देने से ही इंकार कर रही है। वास्तव में वह तो यही कहना चाहती है कि मौजूदा भाजपा सरकार के राज में, गरीबी ही खत्म हो गयी है।

नियोजन का ही त्याग

योजना आयोग को खत्म करने के बाद, रिपोर्टों के अनुसार सरकार अब नियोजन की प्रक्रिया का ही त्याग करने पर विचार कर रही बताते हैं। अगली पंचवर्षीय योजना या वार्षिक योजनाओं को छोड़ दिया गया है। नियोजन की प्रक्रिया के ही छोड़े जाने का अर्थ यह है कि उप-योजनाओं की अवधारणा को भी छोड़ा जा रहा होगा। इसके अनुसूचित जाति उपयोजना के लिए और अनुसूचित जनजाति उपयोजना के लिए गंभीर नतीजे होंगे। हम यह मांग करते आ रहे हैं कि इन उपयोजनाओं को समुचित तरीके से लागू किया जाए और इनके फंडों का सही तरीके से उपयोग किया जाए। अब अनुसूचित जाति तथा उपजाति, दोनों ही उपयोजनाओं को त्याग दिया जाएगा और दलितों व आदिवासियों को इन उपयोजनाओं के जरिए जो थोड़ी-बहुत राहत मिल भी रही थी उससे भी वंचित कर दिया जाएगा और रुक-रुककर ही सही, जो भी थोड़ी-बहुत विकास गतिविधियां चल रही थीं, वे भी बंद हो जाएंगी।

इसी प्रकार, तमाम विकास आवंटनों का 10 फीसद उत्तर-पूर्व में खर्च करने की वचनबद्धता को भी, जिस पर चलते हुए ही एक अलग मंत्रालय तथा विभाग गठन किया गया था, अब छोड़ दिया जाएगा। इसके उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में बहुप्रतीक्षित विकास गतिविधियों के लिए गंभीर नतीजे निकलेंगे। इससे जनता का असंतोष ही बढ़ेगा, जो जनता के बढ़ते अलगाव से पैदा होने वाली, असंतोष से जुड़ी समस्याओं को और बढ़ाएगा।

प्रधानमंत्री अपना प्रचार हमला जारी रखे हुए हैं, जिसमें ऐसी अनेक उपलब्धियों के दावे किए जा रहं हैं, जो फर्जी साबित हो रही हैं। प्रधानमंत्री ने बहुप्रचारित जन-धन योजना के तहत 24 करोड़ 10 लाख बैंक खाते खोले जाने के दावे किए हैं। लेकिन अब पता चल रहा है कि इनमें से 75 फीसद खातों में 2014 के साल में शून्य बैलेंस था। मीडिया द्वारा किए गए भंडाफोड़ से पता चलता है कि राष्ट्रीयकृत बैंकों से, जिनमें इनमें से ज्यादातर खाते खुले हैं, इन खातों में एक-एक रुपया जमा कराने के लिए कहा गया है, ताकि आंकड़ों के स्तर पर शून्य बैलेंस वाले खातों की सं या नीचे लायी जा सके। इस तरह की तिकड़म के चलते ऐसे शून्य बैलेंस खातों की सं या 2015 में 8 करोड़ 40 लाख से घटकर, 5 करोड़ 87 लाख रह गयी है।

प्रधानमंत्री इसके दावे करना जारी रखे हुए हैं कि सब्सीडी वाले गैस सिलेंडर की लक्षित आपूर्ति की उनकी अपील से देश की 22,000 करोड़ रु0 से ज्यादा की बचत हुई है। इस मिथक को भी नियंत्रक तथा महालेखा परीक्षक ने बेनकाब कर दिया है। उसने बताया है कि सब्सीडी वाले सिलेंडर कम लिए जाने से हुई बचत तो सिर्फ 1,763 करोड़ रु0 की है, जबकि 21,552 करोड़ रु0 की बचत तेल के अंतर्राष्ट्रीय दाम में गिरावट की वजह से हुई है। ऐसा ही किस्सा प्रधानमंत्री के ग्रामीण विद्युतीकरण के दावे का है। इस सिलसिले में लाल किले के अपने भाषण में उन्होंने जो उदाहरण दिए थे, उन्हें प्रधानमंत्री के आधिकारिक सोशल मीडिया खातों से हटा दिया गया है। सरकारी दावों में 98.7 फीसद गांवों का विद्युतीकरण किया जा चुका है। लेकिन, खुद सरकारी आंकड़े दिखाते हैं कि 35.73 फीसद ग्रामीण परिवारों (6.14 करोड़) को बिजली तक पहुंच ही हासिल नहीं है।

सरकारी कर्मचारियों के वेतन में वृद्धि निराशाजनक

केंद्र सरकार कर्मचारियों के वेतन में सरकार ने वृद्धि की जो घोषणा की है, निराशाजनक निकली है। सातवें केंद्रीय वेतन आयोग की सिफारिशों के आधार पर, सकल आय के लिहाज से भुगतानों में 14.2 फीसद की बढ़ोतरी हुई है और सबसे निचली श्रेणी के कर्मचारियों के मामले में हाथ में आने वाली तन वाह में सिर्फ 7.4 फीसद की बढ़ोतरी हुई है। केंद्र सरकार ने भत्तों में संशोधन पर निर्णय टाल दिया है। सबसे निचले और सबसे ऊपर वाले वेतनमान के बीच का अंतर बहुत ज्यादा बना हुआ है और यह अनुपात 1:14 का है।

कर्मचारी प्रोवीडेंट फंड पर हमला

मेहनतकश जनता को पहले हासिल राहत से वंचित किया जाना जारी है। वास्तव में उसके मामले में गिरावट ही हुई है, जैसे ई पी एफ के मामले में। केंद्र सरकार, कर्मचारियों की गाढ़ी कमाई के इस पैसे पर, जिसे प्रोवीडेंट फंड में डाला जाता है, ब्याज की दर पर 8.6 फीसद की अधिकतम सीमा लगाना चाहती थी। पिछले साल यही दर 8.8 फीसद

रही थी। इस फंड में अगर 8.95 फीसद ब्याज दी जाए तब भी 100 करोड़ रु0 से ज्यादा की बचत हो रही होगी। यह सरकार मजदूरों को उनकी अपनी आय से मिलने वाली जायज राहत तक से वंचित कर रही है।

दरबारी पूंजीवाद

प्रधानमंत्री और उनकी सरकार इसकी शेखी मारते हैं कि यह भारत की पहली ऐसी सरकार है, जो घोटालों के आरोपों से मुक्त है। लेकिन, वास्तव में यह ऐसी सरकार है जो बदतरीन किस्म के दरबारी पूंजीवाद को चला रही है और अपने चहेते भीमकाय कार्पोरेट खिलाड़ियों को फायदा पहुंचा रही है। भारत के कार्पोरेटों पर बैंकों का पूरे 8.5 लाख करोड़ रु0 का कर्जा है जिसे लेने के बाद लौटाया नहीं जा रहा है। शीर्ष दस कार्पोरेट ग्रुपों पर 2016 की मार्च में 57,368 करोड़ रु0 के ऐसे कर्जे थे। सरकार अब इसकी कोशिश में है कि इन ऋणों को या तो माफ कर दिया जाए या उनका पुनर्गठन कर दिया जाए। इसके लिए राष्ट्रीयकृत बैंकों के पुनर्पूंजीकरण की जरूरत है। ऐसा करने के लिए सरकार, भारतीय रिजर्व बैंक के संचित कोष पर हाथ डालने की कोशिश कर रही है। भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर, रघुराम राजन को इस पद पर नहीं रहने दिया गया है क्योंकि वह ऐसे कदम के पक्ष में नहीं थे, जो हमारे देश की समूची वित्त प्रणाली के ही अस्थिर किए जाने की ओर ले जा सकता है। अब जबकि उनसे छुट्टी पायी जा चुकी है, हमें सावधानी के साथ इस पर नजर रखनी होगी कि क्या रिजर्व बैंक के संचित फंड का, जोकि बुनियादी तौर पर जनता का ही पैसा है, इन कार्पोरेटों को फायदा पहुंचाने के लिए, बैंकों का पुनर्पूंजीकरण करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है ? यह दरबारी पूंजीवाद की सबसे नंगी अभिव्यक्ति के सिवा और कुछ नहीं है। सरकार ने संसद में यह कबूल किया है कि 2014-15 तथा 2015-16 के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने 1,12,089 करोड़ रु0 के बट्टे-खाते में डाले हैं। कार्पोरेटों को ऐसी भारी ऋण माफी तब दी गयी है जबकि गरीब किसान पर कुछ हजार रुपए के ऋण के लिए मामला चलाया जाता है और उसकी संपत्ति तथा मवेशियों को जब्त कर लिया जाता है। ऋण का यही बोझ किसानों की बढ़ती आत्महत्याओं का मु य कारण है। सरकार ऋण माफी के जरिए इस तरह के कृषि संकट के पीड़ितों को राहत दिलाने के लिए तो तैयार नहीं है लेकिन, इतने विशाल पैमाने पर कार्पोरेटों के ऋण माफ करने के लिए तैयार है।

पहले कार्पोरेटों को ये ऋण लौटाने के लिए मजबूर किया जाना चाहिए और उसके बाद ही बैंकों का पुनर्पूंजीकरण किया जाना चाहिए। लेकिन, यह सरकार इस तरह के तर्क को स्वीकार करने से ही इंकार कर रही है। हमारे संघर्ष का आधार यह नारा होना चाहिए--पहले वसूली, फिर पुनर्पूंजीकरण।

दरबारी पूंजीवाद की और बड़ी अभिव्यक्ति इस तथ्य में है कि खुद सरकार ने कबूल किया है कि 2015-16 में परित्यक्त कर राजस्व बढ़कर 6,11,128 करोड़ रु0 पर पहुंच गया। एक ओर तो कार्पोरेटों तथा अमीरों को इस तरह की कर रियायतें दी जा रही हैं और दूसरी ओर यह दलील दी जा रही है कि सरकार के पास जनता को राहत देने के पहले से विधायी रूप हासिल कर चुके कार्यक्रमों के लिए भी पैसा नहीं है। यह भाजपा के नेतृत्ववाली सरकार द्वारा चलाए जा रहे दरबारी पूंजीवाद के बारे में बहुत कुछ कहता है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था का बैठता ढांचा

प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा तंत्र में सार्वजनिक निवेश के स्तर में तेजी से गिरावट के चलते, सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था के संकट ने करीब-करीब एक आपात स्थिति का जैसा रूप ले लिया है। सरकारी संस्थानों, अस्पतालों तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की कमी है, जबकि इस क्षेत्र में निजी कारोबार तेजी से फैल रहा है। इन हालात में गरीबों तथा साधनहीनों को वाकई दयनीय हालात का सामना करना पड़ रहा है। दवाओं के उत्पादन तथा वितरण से सरकार के हाथ खींचने से, दवाओं के दाम आकाश छू रहे हैं। हजारों थैलसीमिया पीड़ितों की जिंदगी खतरे में है, जो डेस्फराल दवा पर निर्भर हैं, जिसकी नोवार्तिस ने कृत्रिम कमी पैदा कर दी है। नोवार्तिस इस दवा की इकलौती निर्माता कंपनी है।

आम खाद्य असुरक्षा तथा पोषण की दयनीय स्थिति के चलते, भारत कुपोषण की भयावह स्थिति का प्रदर्शन कर रहा है। यह छोटे बच्चों तथा गर्भवती महिलाओं के बीच कुपोषण के हैरान करने वाले स्तर में खासतौर पर खुलकर सामने आ जाता है। बच्चों के बीच, उम्र से कम वजन तथा कम शारीरिक विकास का अनुपात, भारत में दुनिया भर में सबसे ज्यादा है। स्वास्थ्य व्यवस्था में सकल घरेलू उत्पाद का करीब एक फीसद ही खर्च किए जाने के चलते हम, डेंगू तथा चिकनगुनिया जैसे संचारी वाइरल रोगों के विस्फोट पर अंकुश लगाने में असमर्थ हैं। दिल्ली तथा कोलकाता जैसे बड़े महानगरों में इन रोगों ने महामारी का रूप ले लिया है।

महिलाओं और दलितों पर बढ़ते अत्याचार

अपने चुनाव अभियान के दौरान भाजपा तथा वर्तमान प्रधानमंत्री मोदी द्वारा इस मुद्दे पर पिछली यूपीए सरकार के खिलाफ हमलावर प्रचार किए जाने के बावजूद, महिलाओं पर अत्याचार न सिर्फ जारी हैं बल्कि खतरनाक तरीके से बढ़ रहे हैं। इन अत्याचारों की सबसे चिंतानजक खासियत है, बच्चियों के साथ बलात्कार के बढ़ते साक्ष्य सामने आना। दुधमुंहे बच्चों तक को नहीं ब शा जा रहा है। ऐसे माहौल में जहां अल्पसं यकों तथा दलितों पर बढ़ते हुए हमले हो रहे हैं, इन तबकों की महिलाओं पर यौन हमले, इस हमलावरपन का ज्यादा से ज्यादा कारगर हथियार बनते जा रहे हैं। जहां तक महिलाओं के सशक्तीकरण का सवाल है, महिला आरक्षण विधेयक, दो दशक पहले अपनी यात्रा शुरू होने के बावजूद, अब भी ठंडे बस्ते में ही पड़ा हुआ है। महिलाओं के आंदोलन के अलावा जनता के तमाम जनतांत्रिक हलकों को इस विधेयक का पारित होना सुनिश्चित करने के लिए दबाव डालना चाहिए।

2 सितंबर की हड़ताल

देश में मेहनतकश जनता के जीवन स्तर में इस भारी गिरावट के विरुद्ध व मेहनतकश जनता के जायज जनतांत्रिक अधिकारों की हिफाजत करने के लिए और नव-उदारवादी आर्थिक सुधारों की नीतियों के खिलाफ जिन्हें यह सरकार, मनमोहन सिंह की पिछली सरकार से भी ज्यादा आक्रामक तरीके से लागू कर रही है, केंद्रीय ट्रेड यूनियनों के आम हड़ताल के आह्वान को देश भर से व्यापक समर्थन मिला है। इस बार की हड़ताल का असर, पिछले साल की हड़ताल से ज्यादा रहा।

बढ़ता सांप्रदायिक ध्रुवीकरण

स्वयंभू गोरक्षा कमेटियों पर रोक लगाओ: केंद्रीय कमेटी की पिछली बैठक की रिपोर्ट में हमने विभिन्न राज्यों में भाजपायी सरकार के संरक्षण में, हिंदुत्ववादी ताकतों द्वारा किए जा रहे चौतरफा हमले की चर्चा की थी। 2014 में सरकार बनाने के बाद से लव जेहाद, घर वापसी, जबरन धर्मांतरण, हिंदुत्ववादी राष्ट्रवाद, घृणा फैलाने वाले भाषण आदि, कभी इस और कभी उस मुद्दे पर अभियान चलाने के बाद, इन ताकतों ने अब ''गोरक्षा'' को अपना ताजातरीन मुद्दा बनाया है। गोरक्षा करने के नाम पर विभिन्न राज्यों में गोरक्षक कमेटियों को सक्रिय कर दिया गया है। ये स्वयंभू गोरक्षक गिरोह, वास्तव में तूफानी दस्तों के गिरोह हैं, जो गोरक्षक होने के नाम पर, दलितों व मुसलमानों पर, गोहत्या करने तथा गाय का मांस खाने के झूठे आरोप लगाकर, अंधांधुंध हमले कर रहे हैं। अनेक भाजपायी राज्य सरकारों ने और कुछ दूसरी सरकारों ने भी गो-रक्षा कानून बनाए हैं। इन स्वयंभू गोरक्षक गिरोहों ने इस कानून को लागू कराने का जि मा अपने ऊपर ले लिया है। इसका नतीजा यह हुआ है कि मुसलमानों तथा दलितों को आतंकित किया जा रहा है और उन पर हमले किए जा रहे हैं। दादरी में मोह मद इखलाक की पीट-पीटकर हत्या कर दिए जाने के बाद, झारखंड में लातेहर में दो मुस्लिम मवेशी व्यापारियों को सार्वजनिक रूप से फांसी देकर मार दिया गया। गुजरात में उना में खासतौर पर दलितों को निशाना बनाकर, चार दलित युवकों को कोड़े लगाए गए। ताजातरीन घटना, हरियाणा के मुस्लिम बहुल जिले मेवात की है। यहां बक्र ईद की पूर्व-संध्या में, गोमांस खाने के आरोप में, दो युवतियों को सामूहिक बलात्कार का निशाना बनाया गया और उनके परिवार के दो लोगों की हत्या कर दी गयी। मेवात की बिरयानी मशहूर है। यहां गोमांस का प्रयोग किए जाने की जांच के नाम पर, काफी सं या में बिरयानी के नमूने उठाए गए। इसका नतीजा यह हुआ कि ईद के मौके पर भी, इस तरह के आतंकित करने वाले हथकंडों के चलते, बिरयानी का अच्छा-खासा कारोबार पूरी तरह से ठंडा पड़ गया।

स्तब्ध कर देने वाले तरीके से ऐसे ज्यादातर मामलों में पुलिस तथा प्रशासन मूक दर्शक ही बने रहे हैं। कई बार तो वे दोषियों की ही मदद करते हैं और इन हमलों के पीड़ितों के खिलाफ ही मामले दर्ज कर लेते हैं। पुन: इस तरह के गोरक्षा कानूनों तथा गोरक्षा के नाम पर गुंडागर्दी से, खेती तबाह हो रही है और किसानों की जिंदगियां बर्बाद हो रही हैं। ज्यादातर जगहों पर, उत्पादक उम्र के बाद गायों की देख-भाल करने के लिए कोई प्रावधान ही नहीं है। ऐसी आवारा गायों के झुंड खेतों में घुस जाते हैं और फसल नष्ट कर देते हैं। इस नुकसान के लिए किसानों को कोई मुआवजा नहीं मिलता है। जहां पर गौशालाएं मौजूद भी हैं, मिसाल के तौर पर राजस्थान में (जहां भाजपायी सरकार ने एक अलग गोरक्षा मंत्रालय बना रखा है) देख-भाल का सरासर अभाव होने के चलते सैकड़ों गायें अकाल मौत के मुंह में समा गयीं।

इस तरह के गोरक्षा गिरोहों को कानून अपने हाथ में लेने की इजाजत नहीं दी जा सकती है। कानून का पालन कराने की जि मेदारी सरकारी एजेंसियों तथा पुलिस की है। उन्हें इस व्यवस्था का उल्लंघन करने वालों के खिलाफ कार्रवाई करनी चाहिए। इस तरह के निजी तूफानी दस्तों को मनमानी करने की इजाजत नहीं दी जा सकती है। इन गोरक्षक विजिलांते गिरोहों पर फौरन पाबंदी लगायी जानी चाहिए।

बिहार में छपरा जैसे, देश के विभिन्न स्थानों पर सांप्रदायिक घटनाओं के फूट पड़ने की खबरें आयी हैं। यह साफ है कि हिंदुत्ववादी ताकतें, उत्तर प्रदेश तथा पंजाब के विधानसभा चुनावों की पूर्व-संध्या में, सांप्रदायिक ध्रुवीकरण बढ़ाने की तैयारियां कर रही हैं।

दलितों पर बढ़ते हमले

विभिन्न बहानों से दलितों पर हमलों को भाजपा की सरकार जिस तरह से संरक्षण तथा बढ़ावा दे रही है, उसके खिलाफ देश भर में दलितों के बीच बढ़ता विक्षोभ जमा हो रहा है। आंबेडकर भवन के तोड़े जाने के खिलाफ मुंबई में एक बहुत भारी रैली हुई। उना की दलितों को कोड़े मारे जाने की घटना के बाद, बहुत भारी दलित गोलबंदी हुई थी, जिसे रोकने की भाजपा की सरकार ने विफल कोशिश की थी। दलित, खेतमजदूर तथा महिला जैसे विभिन्न मोर्चों के माध्यम से हमारे कामरेडों ने इस मार्च तथा विरोध कार्रवाइयों में हिस्सा लिया। विभिन्न दलित ग्रुपों तथा पार्टी के बीच तालमेल जारी है और 'दलित स्वाभिमान संघर्ष' के झंडे तले, हमारी सक्रिय हिस्सेदारी के साथ, दिल्ली में 16 सितंबर को एक कार्रवाई का आयोजन किया गया। इस तरह के तालमेल को बढ़ाया जाना चाहिए और इस तरह पार्टी कांग्रेस के इस निर्णय को मजबूत बनाया जाना चाहिए कि आर्थिक शोषण के मुद्दों के साथ-साथ, सामाजिक मुद्दों को उठााया जाए।

धार्मिक अल्पसं यकों पर बढ़ते हमले

इस दौर में अल्पसं यकों पर हमलों में और खासतौर पर मुसलमानों पर हमलों में बड़ी तेजी आयी है। करोड़ों लोगों की उ मीदों के विपरीत, जो यह आशा लगा बैठे थे कि 'सब का साथ, सब का विकास' का मोदी का चुनावी वादा सच्चा है और उनका रिकार्ड, आरएसएस-भाजपा से जुड़े सांप्रदायिक अभियान को पलटने के रास्ते में नही आएगा, हालात बदतर ही हुए हैं। लोगों ने यह उ मीद मुज फरनगर के दंगों के बावजूद और चुनाव में सांप्रदायिक ध्रुवीकरण कराने के लिए, चुनाव की पूर्व-संध्या में कराए सांप्रदायिक झगड़ों की बड़ी सं या के बावजूद, लगा ली थी।

बहरहाल, वास्तविक रिकार्ड दिखाते हैं कि पिछले दो वर्षों में, सांप्रदायिक घटनाओं की सं या वास्तव में पहले से बढ़ गयी है। केंद्र सरकार द्वारा जारी किए गए आंकड़ों के अनुसार पिछले वर्ष, सांप्रदायिक दंगों में मौतों की सं या में भी बढ़ोतरी हुई थी। जहां 2014 में इन दंगों में मरने वालों और घायलों की सं या क्रमश: 95 तथा 1,921 थी, 2015 में यही सं या बढ़कर क्रमश 97 मौतों तथा 2,246 घायलों पर पहुंच गयी। इसका मतलब था, सांप्रदायिक घटनाओं में 17 फीसद की बढ़ोतरी। ये घटनाएं 2014 के 644 के आंकड़े से बढ़कर, 2015 में 751 हो गयीं। आरएसएस तथा उससे जुड़े संगठनों द्वारा भड़कायी जाने वाली सांप्रदायिक हमले की घटनाओं के अलावा हमारी राजनीतिक व्यवस्था में तथा प्रशासन में सांप्रदायिक विषाणु का प्रवेश और प्रमुखता से सामने आ रहा है और अल्पसं यकों के खिलाफ न्याय प्रणाली का पूर्वाग्रह खुलकर सामने आ रहा है।

कश्मीर

बुरहान वानी के मारे जाने के बाद से, पिछले नौ ह ते से ज्यादा से कश्मीर की जनता जन विरोध कार्रवाइयों में सड़कों पर रही है। सुरक्षा बलों की गोलीबारी में सत्तर से ज्यादा लोग मारे गए हैं और कुछ हजार घायल हुए हैं। सुरक्षा बलों द्वारा इस्तेमाल की जा रही छर्रे वाली बंदूकों ने कई लोगों को हमेशा के लिए अपंग बनाकर छोड़ दिया है। जनता की अलगाव की गहरी भावना का पता इस तथ्य से चलता है कि इस बार विरोध कार्रवाइयां शहरों तक सीमित नहीं रही हैं

और ग्रामीण इलाकों तक भी फैल गयी हैं। इस के पहले कभी भी भारतीय शासन और कश्मीरी जनता के बीच इतनी चौड़ी खाई नहीं रही थी। कश्मीर में इन इस अशांति की शुरूआत से ही हमारी पार्टी यह मांग करती आ रही थी कि एक सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडल को इस राज्य का दौरा करना चाहिए और सभी हितधारकों के साथ बिना शर्त बातचीत की प्रक्रिया फौरन शुरू की जानी चाहिए। क र्यू चलते दो महीने हो जाने और संसद में तीन-तीन बार चर्चा होने के बाद, केंद्र सरकार को आखिरकार सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडल भेजना पड़ा था।

हमारी पार्टी हमेशा से इसकी वकालत करती आयी है कि धारा-370 के अंतर्गत ज मू-कश्मीर को दिए गए विशेष दर्जे की हिफाजत की जानी चाहिए और इस राज्य के लिए अधिकतम स्वायत्तता का प्रावधान किया जाना चाहिए। सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडल के दौरे की पूर्व-संध्या में सी पी आइ (एम) और सी पी आइ ने संयुक्त रूप से विश्वास निर्माण के पांच कदम फौरन उठाने की मांग की थी। ये कदम हैं: छर्रे वाली बंदूकों का इस्तेमाल बंद किया जाए; असैनिक इलाकों से अफस्पा तथा सेना को हटाया जाए; सशस्त्र बलों द्वारा ज्यादतियों के सभी मामलों की न्यायिक जांच करायी जाए, जान की हानि उठाने वाले सभी परिवारों के लिए उचित मुआवजा तथा घायलों का पुनर्वास सुनिश्चित किया जाए; आर्थिक विकास तथा रोजगार निर्माण के लिए समयबद्ध परियोजनाएं लागू की जाएं, जिनमें दुलहस्ती तथा उड़ी बिजली परियोजनाओं का हस्तांतरण भी शामिल है; और श्रीनगर में आइएमएम तथा आइआइटी संस्थान खोले जाएं।

वामपंथी पार्टियों ने यह सुझाव भी दिया था कि धारा-370 के क्षय को पलटने के आधार पर, ज मू-कश्मीर में सभी हितधारकों के साथ संवाद शुरू किया जाए। इस राज्य के तीनों क्षेत्रों--ज मू, कश्मीर घाटी तथा लद्दाख की, ज मू-कश्मीर राज्य के दायरे में स्वायत्त संरचनाएं होनी चाहिए। इसके लिए संवैधानिक तथा कानूनी व्यवस्था में बदलाव करने की जरूरत होगी, जिसकी शुरूआत मौजूदा आदेशों तथा कानूनों में संशोधन से की जा सकती है। इसके साथ ही साथ, कश्मीर समेत सभी लंबित मसलों पर पाकिस्तान के साथ बातचीत की जानी चाहिए। पाकिस्तान के साथ चौतरफा बातचीत को आगे बढ़ाने के मुद्दे पर भारत 2014 से कभी गरम तथा कभी नरम नीति अपनाता आया है। समस्या के टिकाऊ समाधान के लिए यह जरूरी है कि भारत के हितों की रक्षा करने के दायरे में, पाकिस्तान के साथ बातचीत दोबारा शुरू की जाए।

सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडल ने 4 तथा 5 सितंबर को इस राज्य का दौरा किया। बहरहाल, सरकार ने न तो ठोस मुद्दों का कोई एजेंडा पेश किया और न ही ऐसे लोगों, पार्टियों, सिविल सोसाइटी संगठनों की निशानदेही की, जिनसे प्रतिनिधिमंडल को मुलाकात करनी थी। इस प्रतिनिधिमंडल में शामिल सी पी आइ (एम) और सी पी आइ ने यह रुख अपनाया था कि प्रतिनिधिमंडल को हुर्रियत के नेताओं समेत सभी हितधारकों के साथ संवाद करना चाहिए।

हमारी पहल पर सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडल के सी पी आइ (एम), सी पी आइ, जद (यू) तथा राजद सदस्यों का एक प्रतिनिधिमंडल पांच हुर्रियत नेताओं से मुलाकात करने के लिए गया। उनमें से एक, गीलानी ने उनसे मुलाकात नहीं की जबकि अन्य चार ने मुलाकात की और हम कश्मीर की जनता को यह संदेश दे पाए कि भारतीय संसद में ऐसी ताकतें भी हैं जो इस तरह आगे बढ़कर हाथ बढ़ाने के लिए तैयार हैं और शांति व सौहार्द्र बहाल करने के लिए, सभी हितधारकों के साथ बात करना चाहती हैं। इस तरह कश्मीर की जनता को एक प्रबल संकेत दिया गया कि भारतीय संसद का एक हिस्सा ऐसा भी है जो कश्मीरी जनता के कहीं ज्यादा सार्थक तथा जीवंत एकीकरण के लिए काम कर रहा है।

सर्वदलीय प्रतिनिधिमंडल के दिल्ली लौटने के बाद सरकार सर्वस मति से एक ऐसा साझा बयान स्वीकार करने के लिए तैयार हो गयी, जिसमें कहा गया था कि, '' केंद्र तथा राज्य की सरकारों को फौरन सभी हितधारकों के साथ एक राजनीतिक संवाद शुरू करना चाहिए।'' इसके बावजूद इस भाजपा सरकार ने इस वक्तव्य पर अमल नहीं किया है। उल्टे उसने घाटी में केंद्रीय सुरक्षा बलों के दस्तों को ही और बढ़ाया है। एक अभूतपूर्व घटनाविकास में ईद के दिन श्रीनगर की सभी बड़ी मस्जिदों को बंद रखा गया। आस्थावानों को ईदगाहों में भी नमाज नहीं पढ़ने दी गयी। श्रीनगर की प्रसिद्ध जामा मस्जिद, इससे पहले 1921 में ही एक प्राकृतिक आपदा के दौरान बंद की गयी थी। यह पहला ही मौका था जब ईद की नमाज के लिए यह मस्जिद बंद रही। इस रोज हुए झड़पों में दो और लोग मारे गए तथा 50 से ज्यादा घायल हो गए।

यह स्थिति खतरनाक है। केंद्र सरकार तथा हिंदुत्ववादी ताकतों को लगता है कि एक उग्र पाकिस्तानविरोधी रुख तथा सुरक्षा बलों के सहारे घाटी में दमनचक्र चलाना, सांप्रदायिक ध्रुवीकरण बढ़ाने की ओर ले जाएगा, जिससे आने वाले चुनावों में भाजपा चुनावी लाभ हासिल कर सकती है। यह एक खतरनाक खेल है। हमें इन खतरों को लेकर भारत की जनता को सतर्क करना होगा और कार्रवाइयों का आयोजन करना होगा ताकि सरकार को सभी हितधारकों के साथ फौरन राजनीतिक संवाद शुरू करने की पहल को लागू करने के लिए मजबूर किया जा सके।

अमरीकी साम्राज्यवाद का जूनियर पार्टनर

अमरीकी साम्राज्यवाद के रणनीतिक जूनियर पार्टनर की भारत की भूमिका को पु ता करने को, जिस सचाई को हमने अपनी पिछली बैठक में दर्ज किया था, मोदी सरकार और मजबूत करना जारी रखे हुए है।

लॉजिस्टिक्स एक्सचेंज मैमोरेंडम ऑफ एग्रीमेंट (एलईएमओए)

केंद्रीय कमेटी की पिछली बैठक में हमने दर्ज किया था कि मोदी सरकार उस लॉजिस्टिकल सहायता समझौते की दिशा में बढ़ रही थी, जो दोनों देशों की सेनाओं को, संयुक्त प्रशिक्षण के तहत, एक-दूसरे की लाजिस्टिकल सहायता सुविधाओं--ईंधन, कल-पुर्जे, यांत्रिकी आदि--का उपयोग करने की इजाजत देती है।

सरकार ने अब औपचारिक रूप से, अमरीका के साथ लाजिस्टिक्स सहायता समझौते पर दस्तखत कर दिए हैं, जिसे लॉजिस्टिक्स एक्सचेंज मैमोरेंडम ऑफ एग्रीमेंट (एलईएमओए) का नाम दिया गया है।
रक्षा मंत्री मनोहर पर्रिकर के अमरीका के दौरे के दौरान इस पर दस्तखत किए गए।

इस तरह के समझौते पर दस्तखत करने के जरिए भारत ने औपचारिक रूप से अमरीका के एक सैन्य सहयोगी का दर्जा हासिल कर लिया है। इस समझौते के तहत अमरीकी वायु सेना तथा नौसेना, साज-सामान की सहायता, ईंधन भरवाने तथा अन्य सेवाओं के लिए नियमित तरीके से भारतीय नौसैनिक तथा हवाई अड्डों का इस्तेमाल कर सकेंगी। अमरीकी सशस्त्र बल, तीसरे देशों में सैन्य कार्रवाइयां चलाते हुए, भारतीय फौजी अड्डों का उपयोग कर सकेंगे।

इस तरह मोदी सरकार ने भारत की संप्रभुता पर समझौता किया है और अपनी रणनीतिक स्वायत्तता को गिरवी रख दिया है।

भारत ने यह जो नया दर्जा हासिल किया है उसी के अनुरूप, भारतीय नौसैनिक पोतों को दक्षिण चीन सागर में गश्त करने के लिए भेजा गया है, जो कि इस क्षेत्र के लिए अमरीकी रणनीतिक लक्ष्यों का ही हिस्सा है।

विदेश नीति में बदलाव

इस मोदी सरकार ने भारत को अमरीका के जूनियर पार्टनर का जो नया दर्जा दिलाया है, उसके दबाव अब भारत की विदेश नीति में बदलाव में दिखाई देने लगे हैं। प्रधानमंत्री मोदी भारत के ऐसे पहले प्रधानमंत्री बनने जा रहे हैं, जो वेनेजुएला में होने जा रहे गुटनिरपेक्ष शिखर स मेलन में हिस्सा नहीं लेने जा रहे हैं। जवाहरलाल नेहरू से लगाकर, भारत के अन्य सभी प्रधानमंत्रियों ने (कामचलाऊ सरकार के प्रधानमंत्री चरण सिंह को छोड़कर) ऐसे स मेलनों में भागीदारी की थी। साफ है कि अमरीका के सहयोगी का दर्जा हासिल करने के बाद यह भाजपायी सरकार, भारत की विदेश नीति की चिरवांछित निर्गुटता की धुरी को पूरी तरह से त्याग ही देने की ओर बढ़ रही है।

बाढ़

बाढ़ के चलते बिहार तथा दूसरे कई राज्यों में भारी तबाही हुई है और जनहानि हुई है। बिहार में ही, बाढ़ से 135 मौतें हुई हैं राज्य के 12 जिलों में 35 लाख लोग बाढ़ की चपेट में आए हैं।

राज्य सरकारों ने, इन आपदाओं के मामले में फौरन राहत का इंतजाम करने और मुआवजा देने के मामले में कोताही की है। इन बार-बार आने वाली बाढ़ों को देखते हुए, इससे निपटने के लिए दूरगामी उपाय करना जरूरी है।

सिंगुर पर फैसला

सुप्रीम कोर्ट ने टाटा कार परियोजना के लिए सिंगुर में 997 एकड़ भूमि के अधिग्रहण को खारिज कर दिया है।

तत्कालीन वाम मोर्चा सरकार ने इस परियोजना के जरिए उद्योगों का विकास करना और इस तरह राज्य में नौकरियों का सृजन करना चाहा था।

बहरहाल, भूमि के अधिग्रहण की प्रक्रिया 1894 के भूमि अधिग्रहण कानून के तहत ही की गयी थी, जो उस समय इसके लिए उपलब्ध एकमात्र कानूनी औजार था। यह ऐसा कानून था जो काश्तकारों के हितों की पर्याप्त रूप से रक्षा नहीं करता था। भूमि अधिग्रहण के मामले में सी पी आइ (एम) ने, 2011 के विधानसभाई चुनावों की अपनी केंद्रीय कमेटी की समीक्षा रिपोर्ट में यह स्वीकार किया था कि, ''इस सिलसिले में प्रशासनिक तथा राजनीतिक गलतियां महंगी साबित हुईं।''

इस परियोजना का परित्याग कर दिए जाने के बाद, तृणमूल कांग्रेस की सरकार विधानसभा में एक विधेयक लायी थी ताकि मुआवजा लेने से इंकार करने वाले लोगों को उनकी जमीन लौटा दी जाए। सी पी आइ (एम) का कहना था कि अब, जमीन के पहले वाले सभी मालिकों को उनकी जमीन लौटा दी जानी चाहिए। उसने कहा था कि मुआवजा स्वीकार करने वालों और मुआवजा स्वीकार नहीं करने वालों के बीच कोई भेद नहीं किया जाना चाहिए।

अब सुप्रीम कोर्ट ने आदेश दिया है कि सभी मूल भूमि मालिकों को अधिगृहीत की गयी जमीन लौटायी जाए और उनका जो मुआवजा बनता है वह भी दिया जाए।

दसियों साल से सी पी आइ (एम) यह मांग करती आ रही थी कि 1894 के पुराने-धुराने कानून को बदला जाए और उसकी जगह काश्तकारों को पर्याप्त सुरक्षा देने वाली व्यवस्था लायी जाए। अंतत: 2013 में संसद ने, भूमि अधिग्रहण में उचित मुआवजा व पारदर्शिता, पुनर्वास तथा पुनर्वसन कानून अपनाया। सी पी आइ (एम), किसानों के हित में इस कानून में और सुधार कराने के अपने प्रयास जारी र ो हुए है। इसके उलट, भाजपा के नेतृत्ववाली केंद्र सरकार ने अध्यादेशों के जरिए इस कानून को कमजोर करने की कोशिश की है और इस कानून को कमजोर करने में लगी हुई है। सी पी आइ (एम) इस कानून को कमजोर करने की तमाम कोशिशों का विरोध करेगी और वह इस समय इस कानून में अनेक राज्यों की सरकारों द्वारा दी जा रही इस तरह की ढीलों के खिलाफ है।

कोकराझार में आतंकी हमला

बोडोलेंड टैरीटोरियल एरिया एडमिनिस्ट्रेशन (बीटीएडी) के मु यालय, कोकराझार शहर के निकट, बालाजान तिनियाली बाजार में, साप्ताहिक हाट के दौरान गोलियां बरसा कर अज्ञात बंदूकधारियों ने कम से कम 14 लोगों की जान ले ली और बीस अन्य को गंभीर रूप से घायल कर दिया। हालांकि यह इलाका लंबे अर्से से आतंक-ग्रसित इलाका माना जाता रहा है, इसके बावजूद पुलिस प्रशासन तथा भाजपायी राज्य सरकार ने जनता के जान-माल की हिफाजत करने के लिए पर्याप्त कदम नहीं उठाए थे।

भाजपा, बोडोलैंड पीपुल्स फ्रंट के साथ गठबंधन कर के सरकार चला रही है और इसलिए, इस तरह के आतंकी हमले होने देने में उसका हाथ हैं। इस हमले को एक चेतावनी की तरह लिया जाना चाहिए और राज्य सरकार को जनता की हिफाजत तथा सलामती सुनिश्चित करनी चाहिए।

कावेरी जल विवाद

कवेरी नदी के पानी के बंटवारे पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले के बाद कर्नाटक में और तमिलनाडु के कुछ हिस्सों में, हिंसा तथा आगजनी होने की खबरें आयी हैं।

तमिलनाडु सरकार ने कावेरी जल बंटवारे के मुद्दे पर ट्रिब्यूनल के एवार्ड को लागू कराने के लिए जो दावा दायर किया था, उस प्रकरण में सुप्रीम कोर्ट ने दस दिन तक, हर रोज 15,000 घन फुट प्रति सैकेंड पानी छोड़ने का आदेश दिया था। इस आदेश पर अपनी आपत्तियों के बावजूद, कर्नाटक राज्य सरकार ने पानी छोड़ा है। बहरहाल, उसने उक्त निर्णय के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में अपील दायर की थी। सुप्रीम कोर्ट ने अपने पहले आदेश में संशोधन कर, कर्नाटक से 12,000 घन फुट प्रति सैकेंड पानी छोड़ने के लिए कहा। उसने पानी की मात्रा घटा दी, लेकिन पानी छोड़े जाने की अवधि बढ़ाकर 15 दिन कर दी। इस चक्कर में कर्नाटक को और ज्यादा पानी छोड़ना पड़ गया। इसी से कर्नाटक में भावनाएं भड़की बताते हैं।

कावेरी जल के बंटवारे का विवाद, कर्नाटक तथा तमिलनाडु के बीच लंबे अर्से से चला आता विवाद है। बारिश की कमी के दौर में, संकट के हालात में पानी के बंटवारे के प्रश्नों को, वार्ताओं और परस्पर सहमति के जरिए ही हल किया जा सकता है। इस तरह के विवादों को दोनों राज्यों में जनता के बीच भावनाएं भड़काने और एक-दूसरे के खिलाफ खड़ा करने से हल नहीं किया जा सकता है।

नयी शिक्षा नीति

नयी शिक्षा नीति पर हमने संसद में चर्चा सुनिश्चित की थी। मानव संसाधन विकास (एचआरडी) मंत्री को संसद को भरोसा दिलाना पड़ा था कि नयी शिक्षा नीति का मौजूदा मसौदा, सिर्फ परामर्श के लिए रखा गया मसौदा है और शिक्षा नीति तो परामर्श की प्रक्रिया के बाद और संसद में चर्चा के बाद ही तय की जाएगी। अब यह तो वक्त ही बताएगा कि वे कहां तक इस आश्वासन पर कायम रहते हैं।

फिर भी यह मसौदा भारतीय शिक्षा के केंद्रीयकरण, संप्रदायीकरण तथा व्यापारीकरण का ही नुस्खा है। इसके अनेक गंभीर निहितार्थ हैं जिनका अध्ययन शिक्षकों, छात्रों, जन विज्ञान आंदोलन, सूचना प्रौद्योगिकी, फ्री सॉ टवेयर आंदोलन आदि, अलग-अलग तथा मिलकर भी कर रहे हैं और एक सुचिंतित जवाब तैयार किया जा रहा है।

लेकिन, जहां तक इस मसौदे की दिशा का सवाल है, यह स्पष्ट रूप से समूची भारतीय शिक्षा व्यवस्था के ही संप्रदायीकरण का प्रयास है। भाजपायी सरकारों वाले राज्यों में स्कूल स्तर के पाठ्यक्रम में पहले ही भारी फेर-बदल किए जा चुके हैं। उच्च शिक्षा को, हिंदुत्ववादी दर्शन तथा एजेंडा के अनुरूप ढालने के लिए रूपांतरित करने की कोशिश की जा रही है। कुल मिलाकर प्रयास शिक्षा प्रणाली को ही इस तरह बदल देने का है कि भारतीय इतिहास के अध्ययन को हिंदू मिथकों के अध्ययन में घटाकर रख दिया जाए और भारतीय दर्शन की समृद्ध विरासतों को, हिंदुत्ववादी धर्मशास्त्र के अध्ययन में तब्दील कर दिया जाए।

यह हमारे धर्मनिरपेक्ष, जनतांत्रिक गणराज्य के चरित्र को ही बदलने की और हमारे मूल्यों के आधारों को, मिली-जुली संस्कृति को और विभिन्न धर्मों, भाषाओं, आदतों, रिवाजों तथा संस्कृतियों के सह-अस्तित्व को ही बदलने की गंभीर कोशिश है।

हमारी इकाइयों को शिक्षा नीति पर इस बहस में हिस्सा लेना चाहिए, जिसे मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा अपने वैबसाइट के जरिए चलाया जा रहा है। हमारे विभिन्न मोर्चे अपनी-अपनी गतिविधियां तय कर रहे हैं, जिनके पीछे लक्ष्य यह है कि अंततः दूसरे मोर्चों को साथ तालमेल किया जाए और शीतकालीन सत्र के दौरान, जब अंतिम मसौदे के अनुमोदन के लिए पेश किए जाने की उ मीद की जाती है, संसद के सामने एक जबर्दस्त हस्तक्षेप का आयोजन किया जाए।

अगरतला में हिंसा

आइपीएफटी ने त्रिपुरा के आदिवासियों के लिए एक पृथक राज्य की मांग को लेकर एक विभाजनकारी अभियान छेड़ रखा है। 23 अगस्त को उसने अगरतला में एक रैली की और हिंसा की। अगरतला शहर के एक हिस्से में

शुरू हुई घटनाएं जल्द ही शहर के अन्य हिस्सों में भी फैल गयीं और करीब 20 लोग घायल हुए, जिन्हें अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा। तृणमूल कांग्रेस तथा भाजपा के कुछ हिस्सों ने भी हालात का फायदा उठाया और आगजनी करने वालों में शामिल हो गए। बहरहाल, पूर्ववर्ती टीयूजेएस के तीन गुटों ने और आइएनपीटी ने राज्य में शांति तथा सौहार्द्र बहाल करने का आह्वान किया।

पार्टी तथा वाम मोर्चा ने हस्तक्षेप कर जनता को गोलबंद किया ताकि इन हमलों के खिलाफ तथा शांति बनाए रखने के लिए आवाज उठायी जा सके। 28 अगस्त तो वाम मोर्चा ने एक शांति रैली का आयोजन किया और जनता से शांति तथा सौहार्द्र बनाए रखने की अपील की। त्रिपुरा की जनता का आदिवासी-गैरआदिवासी एकता बनाए रखने का उदारहरणीय रिकार्ड रहा है। सी पी आइ (एम), तमाम जनतांत्रिक ताकतों का आह्वान करती है कि यह सुनिश्चित करने के लिए सतर्क रहें कि वाम मोर्चा सरकार को अस्थिर करने की इन फूटपरस्त ताकतों की शरारतपूर्ण साजिशों को विफल कर दिया जाए और शांति तथा सौहार्द्र को बनाए रखा जाए।

आदिवासी स्वायत्त परिषद उपचुनाव में जीत

सिमना-तमकुर (अजजा) आदिवासी स्वायत्त जिला परिषद सीट के लिए उपचुनाव में, वाम मोर्चा की ओर से खड़े सी पी आइ (एम) उ मीदवार ने जीत दर्ज करायी है। उन्होंने आइपीएफटी के अपने निकटतम प्रतिद्वंद्वी को हराया। हमारे उ मीदवार को मिले वोट में, पिछले साल हुए स्वायत्त परिषद के आम चुनाव के मुकाबले 5.4 फीसद की बढ़ोतरी हुई जबकि आइपीएफटी के उ मीदवार के वोट में भी 5.3 फीसद की बढ़ोतरी हुई। इस चुनाव में आइपीएफटी को दूसरी तमाम विपक्षी पार्टियों का प्रकट या परोक्ष समर्थन मिला था। तृणमूल कांग्रेस ने खुलकर आइपीएफटी को अपना समर्थन दिया था, जबकि भाजपा ने आइपीएफटी के पक्ष में अपने उ मीदवार को मैदान से हटा लिया था।

केरल: एलडीएफ सरकार के सौ दिन

केरल की लै ट एंड डैमोक्रेटिक फ्रंट सरकार ने अपने सौ दिन पूरे कर लिए हैं। इस अवधि में एलडीएफ सरकार ने चुनाव अभियान के दौरान किए गए कुछ वादे पूरे भी कर दिए हैं। सरकार संभालने के फौरन बाद, पेरु बवूर हत्याकांड में मारी गयी जीशा की मां के लिए एक घर बनाया गया और जिस तारीख का वादा था उससे पहले ही उन्हें सौंप दिया गया। कल्याणकारी पेंशनों की दर बढ़ा दी गयी है। बंद काजू मिलों को फिर से खुलवा दिया गया है। 37 लाख से ज्यादा लोगों को घर बैठे पेंशन मिल गयी है। इसके अलावा एलडीएफ सरकार एक चौतरफा ऋण माफी योजना भी शुरू करने में कामयाब रही है। यह सब समाज के कमजोर तबकों की चिंता तथा उनके प्रति प्रतिबद्धता को ही दिखाता है, जिसका वादा एलडीएफ ने किया था।

आरएसएस के हमले: चुनाव नतीजे आने के साथ ही सी पी आइ (एम) कार्यालयों तथा कार्यकर्ताओं पर हमलों का जो सिलसिला शुरू हुआ था और जिसमें हमारे चार कामरेडों की जानें गयी हैं, उसे आरएसएस ने राज्यभर में तेज कर दिया है। इन हमलों का विवरण अलग से उपलब्ध कराया जा रहा है। एक ओर तो वे ये हमले कर रहे हैं और दूसरी ओर सरकार के प्रवक्ताओं के माध्यम से आएसएस-भाजपा ने दुष्प्रचार की जबर्दस्त आंधी छेड़ दी है, जिसमें यह दावा किया

जा रहा है कि सी पी आइ (एम) ही है जो उनके खिलाफ हमले कर रही है। मीडिया में आयी खबरों के अनुसार, केंद्रीय गृहमंत्री ने भी केरल के मु यमंत्री से बात की है और उनसे आग्रह किया है कि इन हमलों से आरएसएस को बचाएं। सचाई इससे ठीक उल्टी है। पिछले चुनाव में अपने चुनावी समर्थन में बढ़ोतरी को देखते हुए भाजपा, हिंसा तथा आतंक की इस तरह की कार्यनीति के जरिए, केरल में अपनी राजनीतिक ताकत बढ़ाने की कोशिश कर रही है। वह प्रधानत: मुस्लिम आबादी वाले इलाकों में सांप्रदायिक ध्रुवीकरण बढ़ाने का सहारा तो खैर ले ही रही है। आरएसएस-भाजपा द्वारा सी पी आइ (एम) तथा एलडीएफ के खिलाफ छेड़े गए इस गंभीर हमले का मुकाबला करने के लिए, हमारी पार्टी को तैयार रहना होगा।

बंगाल में चुनावोत्तर हिंसा

पश्चिम बंगाल में चुनावोत्तर हिंसा, जिस पर हमने अपनी पिछले बैठक में गौर किया था, अब भी जारी है। फिर भी तृणमूल कांग्रेस द्वारा अपनाए गए तरीकों में एक बदलाव आया है। आतंक तथा धौंसपट्टी के साथ ही वे अब लोगों को जबरन मजबूर करने तथा लालच (घूस) देने के हथकंडों का भी इस्तेमाल कर रहे हैं ताकि विधानसभाई चुनाव से पहले वाम मोर्चा द्वारा जीते गए विभिन्न स्थानीय निकायों पर कब्जा कर सकें। नयी तरह के आतंकी हथकंडे आजमाए जा रहे हैं जिनमें महिलाओं को धमकाया जाता है कि अगर उनके पति ने वामपंथी कार्यकर्ता के रूप में काम बंद नहीं किया, तो महिला को विधवा बनकर जीना पड़ेगा। इसी प्रकार जिन परिवारों की लड़कियां कॉलेज पढ़ने जाती हैं, उन्हें डराया जाता है कि अगर वे लाइन पर नहीं आए तथा तृणमूल कांग्रेस के पाले में नहीं गए तो, लड़कियों के साथ बलात्कार समेत कुछ भी हो सकता है। इन तमाम हथकंडों के योग से वे अनेक स्थानीय निर्वाचित निकायों का नियंत्रण हथियाने या उन पर जबरन कब्जा करने में कामयाब रहे हैं। वाम मोर्चा ने बहुमत के साथ जिन 79 पंचायत समितियों का गठन किया था, उनमें से 43 पर इसी तरह तृणमूल कांग्रेस अब तक कब्जा कर चुकी है। वाम मोर्चा ने जिन 79 पंचायत समितियों में जीत हासिल की थी, उनमें से केवल 36 पर उसका नियंत्रण रह गया है। इसी प्रकार, 857 ग्राम पंचायतों में वाम मोर्चा ने बहुमत हासिल किया था। इस तरह के हथकंडों से तृणमूल कांग्रेस ने इनमें से 416 ग्राम पंचायतों पर जबरन कब्जा कर लिया है और अब सिर्फ 427 पर वाम मोर्चा का नियंत्रण रह गया है। इसी प्रकार, जहां तक नगर निकायों का सवाल है, चुनाव में बहुमत हासिल कर वाम मोर्चा ने 9 नगरपालिका बोर्डों का गठन किया था। इनमें से 6 पर अब तृणमूल कांग्रेस ने जबरन कब्जा कर लिया है, 3 नगरपालिका बोर्डों पर ही वाम मोर्चा का नियंत्रण रह गया है।

सी पी आइ (एम) तथा वाम मोर्चा के खिलाफ तृणमूल कांग्रेस द्वारा ऐसे ही हथकंडों का इस्तेमाल किया जा रहा है। बंगाल में हुए हमलों की सं या, इन हमलों में मारे गए साथियों की सं या, आंतरिक रूप से विस्थापित हुए परिवारों की सं या, उन लोगों की सं या जिनकी खेती की जमीनों पर जबरन कब्जा कर लिया गया है, आदि विवरण अलग से उपलब्ध कराए जा रहे हैं।

आने वाले दिनों के हमारे काम

कश्मीर में हालात बहुत गंभीर हैं और जैसा कि हमने अपने पार्टी कार्यक्रम में कहा है, इस मुद्दे को जिस तरह के लिया गया है, ''राष्ट्रीय एकता के महत्वपूर्ण मुद्दे को जनतांत्रिक तरीके से हल करने में पूंजीपति-भूस्वामी वर्गों की विफलता का उदाहरण है।''

इस राज्य के हालात को भाजपा की सरकार द्वारा आगे बढ़ाए जा रहे सांप्रदायिक एजेंडा ने और बिगाड़ दिया है। कश्मीर के साथ इस तरह का सलूक, हमारे देश की एकता व अखंडता के लिए और हमारी सुरक्षा तथा संप्रभुता के लिए भी जो खतरे पैदा कर रहा है, उन पर पार्टी को देश भर में अभियान चलाने चाहिए। हमने जो सुझाव दिए हैं उन्हें, समस्या के समाधान के संभव रास्ते के एक जरूरी तत्व के रूप में, देश की जनता के बीच ले जाया जाना चाहिए।

हमारी पार्टी को चुनाव सुधारों तथा केंद्र-राज्य संबंधों के मुद्दे उठाने के लिए पहल करनी चाहिए। हमें जनता के व्यापकतर हिसों को गोलबंद करने की कोशिश करनी चाहिए, जो एक कहीं ज्यादा सच्चे अर्थों में जनतांत्रिक तथा निष्पक्ष चुनाव प्रणाली खड़ी करने के पक्ष में हैं। इसी प्रकार, हमें क्षेत्रीय पार्टियों के साथ तालमेल करना चाहिए और संघीय ढांचे व केंद्र-राज्य संबंधों की रक्षा करने तथा उनमें सुधार का मुद्दा उठाना चाहिए। इस मुद्दे को सार्वजनिक अभियान के लिए लिया जाना चाहिए।

जैसकि हम अपनी पार्टी कांग्रेस में तथा सांगठनिक प्लेनम में पहले ही तय कर चुके हैं, हमारी राज्य कमेटियों को सांप्रदायिकताविरोधी मंच खड़े करने के लिए फौरन कदम उठाने चाहिए। इसमें जनतांत्रिक तथा धर्मनिरपेक्ष ताकतों को खींचा जाना चाहिए और भांति-भांति के कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए ताकि सांप्रदायिक ध्रुवीकरण की कोशिशों को विफल किया जा सके।

हमारी राज्य इकाइयों को अपने-अपने राज्य में वामपंथी तथा जनतांत्रिक शक्तियों की निशानदेही करनी चाहिए और वैकल्पिक नीतियों के मंच और मेहनतकश जनता की मांगों के आधार पर, इन ताकतों को गोलबंद करने की योजनाएं बनानी चाहिए।

मौजूदा हालात में वामपंथी ताकतों तथा दलित आंदोलन के बीच एकता के मजबूत सूत्र विकसित करने के जो अवसर खुले हैं, उन्हें सुनियोजित तरीके से आगे बढ़ाया जाना चाहिए। राज्यों के स्तर पर हमारी इकाइयों को पहल करनी चाहिए और ऐसी कार्रवाई की एकता कायम करनी चाहिए।

इस मोदी सरकार ने जो अमरीकी साम्राज्यवाद के रणनीतिक जूनियर पार्टनर का दर्जा मंजूर कर लिया है उसके खिलाफ पार्टी को, सभी स्तरों पर एक साम्राज्यवादविरोधी अभियान चलाना चाहिए।

महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति की शतवार्षिकी के पालन के 21वीं कांग्रेस के द्वारा स्वीकार किए गए प्रस्ताव को लागू किया जाए। हमने 7 नवंबर 2016 से 7 नवंबर 2017 तक, साल भर लंबा अभियान चलाने का फैसला लिया था। राज्य कमेटियों को ठोस तथा सुनिश्चित कार्यक्रमों व गतिविधियों को तय करना चाहिए, जिनमें इस क्रांति की विजय के बहुआयामी प्रभाव को और जिस तरह उसने बीसवीं सदी में मानव स यता के विकास की रूपरेखा को गढ़ा था उसे लिया जाए।

इस तरह केंद्रीय कमेटी ने तय किया:

1. जनता पर डाले जा रहे बढ़ते बोझ--बढ़ती बेरोजगारी; महंगाई; कृषि संकट के बोझ से किसानों को राहत; भूमि का मुद्दा; सार्वजनिक वितरण प्रणाली से राशन, मनरेगा की मजदूरी, कल्याणकारी योजनाओं आदि के लिए आधार की अनिवार्यता के जरिए कानूनी हकदारियों से वंचित किए जाने, आदि --के खिलाफ, स्थानीय स्तर पर जनता के ज्वलंत मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करते हुए अभियानों, विरोध कार्रवाइयों तथा जुझारू कार्रवाइयों को सभी राज्यों में तेज किया जाए।
2. कश्मीर के हालात पर सभी राज्यों में अभियान चलाए जाएं।
3. जनतांत्रिक तथा धर्मनिरपेक्ष ताकतों को साथ लेकर, सांप्रदायिकताविरोधी मंचों का निर्माण करें।
4. दलित ग्रुपों के साथ संयुक्त गतिविधियों/ कार्रवाइयों को मजबूत करें।
5. महिलाओं तथा बच्चों पर बढ़ते हमलों के खिलाफ अभियान चलाएं।
6. अमरीकी साम्राज्यवाद के सामने इस भाजपायी सरकार के आत्मसमर्पण के खिलाफ अभियान चलाएं।
7. महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति की शतवार्षिकी सफलतापूर्वक मनाएं। 0